दीवान
-ए-
ग़ालिब

نام مررا اسد الله حاں

عرف مررا بوشه

تحلص اسد اور عالب

خطاب بحم الدوله، دبیر الملک

پیدائش آگره، ۲۷ دسمبر ۱۷۹۷ء

وفات دہلی، ۱۵ وروری ۱۸۶۹ء

مدفن حاىداں لوہارو کا قبرستاں،
سلطاں حی چوسٹھ کھمبا، بطام الدیں، دلّی.

नाम मिर्ज़ा असदुल्लाह ख़ाँ

उपनाम मिर्ज़ा नौशः

कविनाम 'असद' और 'ग़ालिब'

पदवि नज्मुद्दौलः, दबीरुलमुल्क

जन्म आगरा, २७ दिसम्बर १७९७

मृत्यु देहली, १५ फ़रवरी १८६९

मज़ार लोहारू वंश का कब्रिस्तान,
सुलतानजी, चौसठ खंभा निजामुद्दीन, दिल्ली।

भूमिका

मानव मस्तिष्क का विस्तार असीमित होने के बावुजूद एक व्यक्ति का मस्तिष्क कितना ही विशाल क्यों न हो फिर भी सीमित रहता है। बड़े से बड़ा कवि और चिन्तक भी इस नियम का अपवाद नहीं। लेकिन उसकी रचना, कविता या स्वप्न जिसे वह अपने व्यक्तित्व से अलग करके आइने की तरह दुनिया के सामने रखदेता है, मानव-मस्तिष्क का असीमित विस्तार धारण करलेता है। आनेवाली पीढ़ियो का हर पाठक अपनी बौद्धिक योग्यता और भावना की तीव्रता के अनुसार उस रचना में नये अर्थों और गुणो की वृद्धि कर देता है। अत:एव ग़ालिब या शेक्सपियर की एक पंक्ति हज़ार अवसरो पर हज़ार नये अर्थ पैदा कर सकती है। उस के दामन मे इतना विस्तार होता है कि वह आनेवाली जिन्दगी की खुशियो और ग़मो को समेट सके। इसको समालोचना की भाषा में साधारणीकरण, सर्व व्यापकता, और तहदारी के नाम दिये जाते है, जो भावनारहित और विचारशून्य शाब्दिक बाज़ीगरी से भिन्न है और केवल उस समय पैदा होती है जब कवि अपने युग पर हावी होने के साथसाथ शब्दों के संगीत और उनके अर्थों के गुणों से भी भलीभाँति परिचित हो और उनको इस तरह छेड़ सके जैसे संगीतकार साज़ के तारों को छेड़ता है। साहित्य के लम्बे इतिहास में चन्द गिनी चुनी विभूतियाँ इस स्तर पर पूरी उतरती हैं। ग़ालिब उनमें एक है।

ग़ालिब उर्दू का अत्यन्त लोकप्रिय कवि है जिसे इकबाल ने गेटे का समकक्ष माना है। गत सौ वर्षों में दीवान-ए-ग़ालिब के अनेक संस्करण प्रकाशित हुए हैं और असंख्य लेख लिखे गये है। हर समालोचक और पाठक ने अपनी रुचि और स्वभाव के अनुसार ग़ालिब के काव्य में गुंजाइश देखी। कभी प्रशंसा ने श्रद्धा का रूप धारण किया, कभी एक गंभीर विश्लेषण का और कभी उस अतिशयोक्ति का जो कला का सुन्दर आभूषण है।

ग़ालिब का व्यक्तित्व अत्यन्त आकर्षक और सर्वव्यापी था। वंश के विचार से वह ऐबक तुर्क था जिसका दादा उसके जन्म (आगरा, २७ दिसम्बर १७९७) से लगभग अर्धशताब्दि पूर्व समरक़न्द से हिन्दुस्तान आया था। इस खान्दान ने ग़ालिब को "चौड़ा चकला हाड, लाँबा क़द, सिडौल इकहरा जिस्म भरे-भरे हाथ-पाँव, किताबी चेहर:, खड़ा नक़्श: चौड़ी पेशानी, घनी लम्बी पलके और बड़ी बड़ी बादामी आँखें और सुर्ख़-ओ-सुपैद रँग" दिया था। जिस में मदिरा पान ने चम्पई कान्ति पैदा कर दी थी। ग़ालिब का स्वभाव ईरानी था, धार्मिक विश्वास 'अरबी, शिक्षादीक्षा और संस्कार हिन्दुस्तानी और भाषा उर्दू। बुद्धि की कुशाग्रता और काव्य-प्रतिभा जन्मसिद्ध

थी और जिन्दादिली, विचार-स्वातंत्र्य और शिष्टाचार ने सोने पर सुहागे का काम किया जिसके कारण लोग उसके अहं और अभिमान को भी सहन कर लेते थे। शे'र कहना बचपन से आरम्भ करदिया था और पच्चीस वर्ष की आयु से पूर्व ही अपने कुछ उत्तम कसीदे और ग़ज़ले कहली थी और तीस-बत्तीस वर्ष की आयु मे कलकत्ते से दिल्ली तक एक हलचल मचा दी थी। शिक्षा के सम्बन्ध में काफ़ी जानकारी अब तक उपलब्ध नहीं होसकी है लेकिन ग़ालिब अपने युग की प्रचलित विद्याओ का पण्डित था और फ़ारसी भाषा, और साहित्य पर गहरी नजर रखता था। और फिर जीवन का अध्ययन इतना व्यापक था कि उसने स्वयं लिखा है कि सत्तर वर्ष की आयु में जन-साधारण से नहीं जनविशेष से सत्तर हज़ार व्यक्ति नजर से गुजर चुके है। "मैं मानव नही हूँ मानव-पारखी हूँ।" बादशाहो और धनवानो से लेकर मधुविक्रेताओ तक और दिल्ली के पण्डितो और विद्वानो से लेकर अंग्रेज अधिकारियो तक असंख्य व्यक्ति ग़ालिब के निजी दोस्तो में थे। जवानी की रंगरलियो का जिक्र अनेक बार स्वयं किया है। नृत्य, संगीत, मदिरा, सौन्दर्योपासना, जुआ किसी वस्तु से विरक्ति प्रकट नहीं की। और जब बीस पच्चीस वर्ष की आयु मे रंगरलियो से दिल हट गया तो सूफ़ियो जैसा स्वतन्त्र आचार-विचार अपनाया और हिन्दू मुसलमान ईसाई सब से एकसा व्यवहार किया। नमाज़ पढ़ी नहीं, रोज़ा रखा नही, शराब कभी छोड़ी नहीं। हमेशा स्वयं को गुनहगार कहा लेकिन खुदा, रसूल और इस्लाम पर पूरा विश्वास था। चन्द चीजो का शौक हवस की हद तक था। विद्या और प्रतिष्ठा की लालसा एक तीव्र तृष्णा बनकर उम्र भर साथ रही। कडवे करेले, इमली के खट्टे फूल, चने की दाल, अंगूर, आम, कबाब, शराब, मधुर राग और सुन्दर मुखडे हमेशा दिल को खीचते रहे। यो तो ग़ालिब उम्र भर इन चीजो के लिये तरसता रहा लेकिन यदि कभी चन्द चीजे एक साथ जमा होगई तो उस वक्त उसका दिमाग़ आस्मान पर पहुँच गया और उसने स्वयं को त्रिलोक का सम्राट समझ लिया।

चन्द घटनाएँ ग़ालिब के जीवन में बड़ी महत्वपूर्ण है। बचपन में अनाथ होजाना, दिल्ली का निवास और कलकत्ते की यात्रा। और इनका प्रभाव उसके व्यक्तित्व और काव्य पर बडा गहरा है। उसके प्रारम्भिक जीवन और शा'अिरी की बेराह-रवी प्रसिद्ध है। जो बच्चा पॉच वर्ष की आयु मे पिता के वात्सल्य से वंचित हो गया हो और जिसे कोई उपयुक्त तरबियत (शिक्षा-दीक्षा) न मिली हो वह अपनी प्रतिभा और गुणो के आधार पर ही आगे बढ़ सकता था। और इसमें बेराह-रवी बडी महत्वपूर्ण मंजिल है जहॉ ठोकरे उस्ताद का काम करती है। कहा जाता है कि मीर ने ग़ालिब की प्रारम्भिक

शा'अिरी देखकर कहा था कि कोई योग्य उस्ताद मिल गया तो अच्छा शा'अिर बन जायगा नही तो निरर्थक बकने लगेगा। एक ईरानी मुल्ला अब्दुस्समद के सिवाय, (जिसका अस्तित्व संदिग्ध है) जीवन के अनुभव ही ग़ालिब के उस्ताद रहे। ग़ालिब की प्रारम्भिक कठिन और उलझी हुई शा'अिरी पर, जिसके कुछ नमूने प्रस्तुत दीवान में भी बाकी रह गये है, जब आगरे वाले हँसे तो ग़ालिब के अहं ने उसकी कोई परवाह नहीं की। लेकिन शादी के बाद दिल्ली-निवास के दौरान में बड़े-बड़े विद्वानो और माने हुए कला-मर्मज्ञो के सम्पर्क में आने के बाद ग़ालिब उनकी राय की उपेक्षा न कर सका और पच्चीस वर्ष की आयु तक पहुँचते-पहुँचते रुचि सही शे'र की तरफ़ प्रवृत्त होगई। अपनी जागीर और पेन्शन के सिलसिले में ग़ालिब को तीस वर्ष की आयु में (सन् १८२७ ई.) कलकत्ते की जो यात्रा करनी पड़ी वह उसके जीवन का बहुत बडा मोड है। वहॉ उसने केवल नये जीवन की झलकियॉ ही नही देखी बल्कि अपनी असफलता के आइने मे अपना मुँह भी देखा। इस प्रकार ग़ालिब ने मुग़ल संस्कृति की आख़री बहार और नई औद्योगिक संस्कृति के उभरते हुए चिन्ह और उनकी कैफ़ियतो को अपने व्यक्तित्व में समो लिया।

लेकिन इन सब से बडी घटना जीवनभर की निर्धनता है जिसने ग़ालिब को हमेशा बेचैन और व्याकुल रखा। अब न तो पूर्वजो की प्रतिष्ठा और वैभव बाकी था जिनके संबंध प्राचीन ईरानी बादशाहो से मिलते थे, और न बू'अली सीना की विद्या सीने मे थी। इसलिए ग़ालिब ने अपने क़लम को 'अलम (ध्वजा) बना लिया और पूर्वजो के टूटी हुई बर्छियो को कलम (फ़ारसी से)। जिन्दगी ने ग़ालिब के साथ कुछ अच्छा व्यवहार नही किया और हमेशा उसकी रूह में रेगजार (मरुस्थल) ही उँडेले। लेकिन ग़ालिब की आत्मा ने जीवन को लाल:ज़ार (पुष्पोद्यान) प्रदान किये। उसके स्वभाव की यह उदारता उर्दू भाषा और साहित्य को मालामाल कर गई।

यह प्रश्न महत्वपूर्ण है कि ग़ालिब के सामने विश्व और जीवन के बारे में कोई दृष्टिकोण था या नही। वह किसी दर्शन विशेष का निर्माता नहीं है इस लिए उसके यहॉ व्यवस्थित विचार और सन्देश की खोज व्यर्थ होगी। लेकिन ग़ालिब की शा'अिरी में चिन्तन के तत्व और दार्शनिक प्रवृत्ति से इनकार नही किया जा सकता। इसलिए रस्मी विचारो और गजल के परम्परागत विषयो की पैदा की हुई विपरीतता के बावुजूद विश्व और मानव के सम्बन्ध मे ग़ालिब की व्यापक प्रवृत्ति का अनुमान लगाना दिलचस्पी से ख़ाली नहीं है।

इसमें कोई संदेह नही कि उर्दू का यह महान कवि प्राचीन सूफ़ियाना विचारों से प्रभावित था जो उसको अपने अध्ययन के 'अलावा फ़ारसी और

उर्दू काव्य से वर्से में मिले थे। यह कहने के बाद भी कि "शा'अिर को तसव्वुफ़ शोभा नही देता" ग़ालिब ने सृष्टि को समझने के लिए और धर्म के दिखावे से बचने के लिए तसव्वुफ़ के कुछ विचारो से सहायता ली और उन्हीं से अपनी स्वतंत्र और तीखी प्रकृति का प्रशिक्षण किया।

वह वहदत-ए-वुजूद (विश्वदेवतावाद, जगीश्वरवाद, यह विश्वास कि सृष्टि के अनेक रूपो में एक ही तत्त्व विद्यमान है) का माननेवाला था। उसने अपनी फारसी मसनवी "अब्र-ए-गुहरबार" में विश्व को चेतना-दर्पण (आईनः-ए-आगही) कहा है जो ब्रह्म-रूप (वजहुल्लाह) के दर्शन का वातावरण है। न केवल यह कि मानव जिस दिशा में मुँह करता है उस ओर "वह ही वह" नज़र आता है बल्कि जिस मुँह को मानव चारो ओर मोड़ रहा है वह ख़ुद "उसी" का मुँह है। दूसरी जगह फ़ारसी गद्य में यह कहा है कि कण का अस्तित्व उसके अपने अहंकार (पिंदार) के अतिरिक्त कुछ नहीं, जो कुछ है परमसत्य के सूर्य का आलोक है। दरिया हर जगह बह रहा है और उसमें तरंग, बुलबुले और भँवर उभर रहे है। और "हमःऊस्त" (सब कुछ वही है) ही "हमःऊस्त" है (ग़ज़ल ९९, शेर ६, ७; ग़ज़ल १६३ शेर ४, ५, ६, ७)।

चूँकि सृष्टि एक वहदत (एकत्व, अद्वैत) है और अस्लज़ात (ब्रह्म) नश्वर नही है इसलिए विश्व भी नश्वर नहीं हो सकता। ग़ालिब ने यह बात इतनी खुलकर कहीं नहीं कही है लेकिन अपनी फ़ारसी पुस्तक "मेहर-ए-नीम रोज़" में यह विश्वास प्रकट किया है कि जगत्का का कोई बाह्य अस्तित्व नहीं है (या'नी ख़ुदा की ज़ात से अलग जगत की कल्पना केवल भ्रम है "हर चंद कहें कि है, नहीं है") इसलिए अनश्वरता, नश्वरता, नवीनता और पुरातनता का प्रश्न उत्पन्न नहीं होता। सिफ़ात (गुण) 'अैन-ए-ज़ात (स्वयंब्रह्म) हैं और आलोक सूर्य से अलग नहीं। कयामत (प्रलय) के बाद नया आदम (मनु) पैदा होगा और एक आदम के बाद दूसरा आदम प्रकट होगा और संसार योंही चलता रहेगा। ग़ालिब के इस शे'र से भी इस विचार की पुष्टि होती है:

आराइश-ए-जमाल से फ़ारिग़ नही हनोज़
पेश-ए-नज़र है आइनः दाइम निकाब में (९९-९)

यहीं से दूसरा प्रश्न उत्पन्न होता है। यदि विश्व ब्रह्म का प्रकाश है तो वे चीज़ें जिन्हें बदी, गुनाह, मुसीबत, तकलीफ़, दर्द और ग़म कहा जाता है कहाँ से आयी हैं, अंतर्विरोध कहाँ से उभरते है। इसका बँधा-टका पुराना जवाब तो यह है कि आलोक ब्रह्म से जितना दूर होता जाता है उतनी ही उसमे मलिनता (कसाफ़त) आती जाती है। किन्तु इस उत्तर की तार्किक कमज़ोरी यह है कि अन्तर ब्रह्म से अलग वस्तु बन जाता है और "हमःऊस्त" के

सर्वव्यापी घेरे को तोड देता है।

ग़ालिब ने यह प्रश्न उठाया ज़रूर किन्तु इसका संतोषप्रद उत्तर न दे सका। स्वयं सूफ़ियों और दार्शनिको से यह प्रश्न नही सँभल सका तो एक कवि से क्या आशा की जा सकती है। अपनी एक फ़ारसी मसनवी "अब्र-ए-गुहरबार" के "मुनाजात" वाले हिस्से में ग़ालिब केवल यह कह सका कि सिफ़ात-ए-कमाल (गुण) के एक बिन्दु से तमाम अंतर्विरोधी वस्तुएँ पैदा होती है लेकिन यह वर्णन-चमत्कार जो "हम:ऊस्त" का विवरण है, असली प्रश्न का उत्तर नही है। इससे अधिक कवितामय और संतोषप्रद उत्तर फ़ारसी के पहले कसीदे में मिलता है जिसमे ग़ालिब ख़ुदा से संबोधन करता है कि तूने अन्य के संदेह (वहम-ए-ग़ैर) से दुनिया मे हलचल मचा रखी है। ख़ुद ही एक अक्षर कहा और ख़ुद ही शंका मे पड़ गया। यह ख़ुद और ग़ैर-ए-ख़ुद का विभाजन ऐसा है कि देखनेवाला और देखा जानेवाला एक होते हुए भी दो मालूम दे रहे है और इनके बीच में पूजा की रीति (रस्म-ए-परस्तिश) का पर्दा पड़ा हुआ है। यद्यपि अद्वैत में द्वैत की समाई नहीं है। फिर आगे चलकर वह गुप्त भेद से पर्दा उठाता है और कहता है कि दुख दर्द भी वही से आये हैं किन्तु इस लिए कि सुख-चैन का आनंद बढ़ा दे। हेमन्त का औचित्य ग़ालिब ने आनंद के नवीनीकरण में ढूँढा है। कठिनाइयाँ एक प्रकार की परीक्षा है ताकि मित्र शत्रु की दृष्टि से छिपा रहे। और अतिथि के पथ में काँटे इसलिए बिछाये गये है कि जब जीर्णता का इलाज किया जाय तो सुख का नया आनंद मिले मानो ख़ुद और ग़ैर-ए-ख़ुद का विभाजन एक ऐसी विपरीतता का कारण है जो जीवन को जीवन बनाती है। यह विपरीतता अद्वैत है द्वैत नहीं—

लताफ़त बेकसाफ़त जल्व: पैदा कर नहीं सकती
चमन जंगार है आईन:-ए-बाद-ए-बहारी का (४८)

यहाँ पहुँचकर बदी नेकी का एक हिस्सा बन जाती है। अपूर्ण और पूर्ण का भेद समाप्त हो जाता है (४२—४)। पदार्थ और आत्मा, जीवन और मृत्यु सब एक हो जाते है। धर्म और धार्मिक विश्वास की हैसियत "मरुस्थल" से अधिक नही रहती। रिति-रिवाज और सम्प्रदाय का त्याग ईमान (विश्वास) का अंग बन जाते है (११२—१४)। हर्ष और विषाद का विभाजन निरर्थक हो जाता है। बहार और खिज़ाँ एक दूसरे के गले मे बाँहे डाल लेती है। एक ही रंग का पैमाना घूम रहा है। बहार (वसंत) इसका एक रंग है और खिज़ाँ (पतझड़) दूसरा। दिन रात एक दूसरे के पीछे दौड़ रहे है। यह सब अद्वैत का आवेश और उत्क्रोश है। एक बिंदु है जो तेज़ी से घूम रहा है और अपनी उड़ान के वेग से नाचता हुआ शोला बन गया है। यह अस्तित्व कष्ट और आराम की कल्पना से निस्पृह है। डूबनेवाले ने लहर का तमाँचा खाया है और प्यासे

ने पानी पी लिया। वैसे दरिया ने स्वयं न किसी को डुबोना चाहा और न पानी पिलाना चाहा। वह अपने आप में लीन है। क्रिया और प्रतिक्रिया उसकी तरंगे है जिनसे आज कल और कल आज बन रहा है—

है तिलिस्म-ए-दह्र में सद हश्र-ए-पादाश-ए-'अमल
आगही ग़ाफ़िल, कि यक इमरोज़ बे फ़र्दा नहीं (ज़मीम: २५)

वहदत-ए-वुजूद (विश्वदेवतावाद) की सीमाएँ कही तो वेदात से जा मिलती है और कहीं नौफलातूनियत (NEO PLATONISM) से। यह दर्शन ज़ात-ए-मुत्लक (ब्रह्म), नफ़ि-ए-सिफ़ात (निर्गुणत्व), और संसारत्याग से लेकर उपमाओ से आरोपित और गुणो से सजी हुई ज़ात (ईश्वर) के विचार तक फैला हुआ है, और जब इसमें ईरानी और तातारी पैगेनिज्म (कुफ़्र) का सम्मिश्रण हो जाता है तो आनन्दप्राप्ति का पहलू भी पैदा हो जाता है। और अब यह अपने अपने साहस पर निर्भर है कि मनुष्य इस मंजिल पर पहुँचकर संसार को तज दे या शौक का हाथ बढ़ाकर इस रंग और प्रकाश, ध्वनि और संगीत से भरे हुए नाचते खिलौने को उठाले।

ग़ालिब ने निश्चय ही इस विश्वास से एक बड़ा आशावादी दृष्टिकोण अपनाया जो उसके सारे काव्य में ख़ून-ए-बहार की तरह दौड़ रहा है। दुख और संताप आनंद के नवीनीकरण की बुनियादे है। इसलिए इनसे विमुख रहना मृत्यु, और खेलना जीवन की दलील है। स्वयं मृत्यु जीवन का आनंद बढ़ा देती है और कार्य-आनंद का साहस प्रदान करती है (२२)। संसार की कठिनाइयाँ इसलिए है कि मानवता की तलवार सान पर चढ जाय और जौहर चमक उठे। ग़ालिब ने अपने एक और फारसी कसीदे में कहा है कि मेरा जुनून (उन्माद) मुझे बेकार नहीं बैठने देता, आग जितनी तेज है उतनी ही मै और उसे हवा दे रहा हूँ, मौत से लड़ता हूँ और नंगी तलवारो पर अपने शरीर को फेकता हूँ, तलवार और कटार से खेलता हूँ और तीरो को चूमता हूँ।

यही कारण है कि ग़ालिब के ग़म इतने आकर्षक है। उनमें जो भरपूर हर्ष की कैफ़ियत है वह उर्दू के किसी कवि के यहाँ नहीं मिलेगी। केवल इक़बाल उसमें ग़ालिब के निकट आता है। किन्तु वहाँ भी आशावाद का चितन-पक्ष अस्तित्व के हर्ष की भावुक कैफ़ियत पर हावी है। ग़ालिब की शा'अिरी में ग़म और हर्ष को अलग अलग करना लगभग असंभव है। इसलिए उसे केवल ग़म या केवल हर्ष का कवि समझना भूल है। वह वास्तव में ग़म की ख़ुशी का शा'अिर है। यानी वह मुसीबतो से लड़कर हर्ष का सामान प्राप्त करता है जैसे शराब की कड़वाहट सहन करके मदिरता की मंजिल प्राप्त की जाती है, फिर वह कड़वाहट स्वयं मदिर बन जाती है।

इसके बाद यह समझने में कोई कठिनाई नहीं रह जाती कि ग़ालिब के

विश्व में मनुष्य का क्या स्थान है। वह भी अन्य सचराचर की भाँति ब्रह्म का प्रकाश है। किन्तु मानव तथा अन्य सचराचर में एक अंतर है। और यह बहुत बडा अंतर है। मानव के पास कामना है, भावना है, शौक है, तड़प है। उसके अंत:करण में एक हलचल है जो अस्तित्व-सागर में जल की आर्द्रता की तरह और रेशम के लच्छे में तार की तरह है (फ़ारसी मसनवी)। और सबसे बड़ी बात यह है कि उसके पास बुद्धि है। वह अपने हाथो और मन के सहयोग से अपना चरित्र और आचरण प्राप्त करता है, और बुद्धि और प्राण के मिलन से वाक्‌शक्ति (अब्र-ए-गुहरबार)। उसकी बुद्धि सीमित सही किन्तु असीम बुद्धि का एक अंश है। ग़ालिब ने "मुग़न्नीनामे" में इस बुद्धि को विश्व की श्रृंगारकारिणी शक्ति कहा है जो रूहानियो (आध्यात्मवादियो) की उषा का प्रकाश और यूनानियो के विज्ञान की रातो का दीप है। संसार की सारी शोभा इसी मानव के कारण है—

जिमा गर्मस्त इन हंगाम: बिनगर शोर-ए-हस्ती रा
कयामत मी दमद अज्ज पर्द:-ए-खाके कि इन्सॉ शुद

(दुनिया की यह हलचल मेरे कारण है और मिट्टी के उस पर्दे मे प्रलय मचल रहा है जो मानव बन गया है)

गालिब की दृष्टि में मानव की महानता इतनी विशद है कि वह उसे सृष्टि का अक्ष (धुरा) समझता है और विश्व की सृष्टि का कारण ठहराता है।

जि आफ़रीनिश-ए-'आलम ग़रज जुज्ज आदम नीस्त
बगिर्द-ए-नुक्त:-ए-मा दौर-ए-हफ्त परकारस्त

(विश्व की सृष्टि का उद्देश्य मानव के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। मैं केन्द्र हूँ और मेरे चारो ओर सात वृत्त घूम रहे है)

मिट्टी के पर्दे से उठनेवाले इस कयामत के फ़ितने का सारा प्रयास यह है कि इस सृष्टि को जिसमें वह चारो ओर से घिरा हुआ है देखे और समझे। हर समय और हर रंग में दुनिया के तमाशे में तन्मय और विभोर रहे और अपनी संकीर्ण ऑखो को उन्मीलित करता रहे (११८)। अपने चारो ओर बिखरी छवि के पर्दे उठाये और उनके अर्थ तक पहुँचने के लिए दिल-ओ-जिगर का खून कर डाले और यदि तत्त्व को समझने का सामान न हो तो भी रूप की जादूगरी के तमाशे में खोजाय (९२—४)। संभव है कि इस सौन्दर्योपासक और दर्शनाभिलाषी के लिए बहार को अवकाश न हो और निगार (सुन्दरी) को प्रेम न हो। न सही, बहार फिर बहार है, निगार फिर निगार है। चमन (उद्यान) की शीतलता और सुरभित समीर से और मा'शूक़ की मस्त अदा से तो इन्कार संभव नहीं है (२१०—६,१०)। कामना की अग्निशाला तो बहरहाल प्रज्वलित रखी जासकती है क्योकि जबतक कल्पना,

अनुध्यान और अभिलाषा की संपत्ति पास है उस समय तक—

हर चे: दर मब्दः-ए-फैयाज़ बुवद आन-ए-मनस्त
गुल जुदा नाशुदः अज़ शाख बदामान-ए-मनस्त

(जो कुछ उदार सृष्टि के पास है मेरा है। डाल से न टूटा हुआ फूल मेरी गोद मे है) इसलिए ग़ालिब की शा'अिरी में संसार, आनंद और इच्छा के त्याग के विषय कदाचित ही मिलेगे जो परंपरागत रूप से चले आये है किन्तु गालिब के अपने स्वभाव का अंश नही है।

ग़ालिब की अभिरुचि रस और आनंद की प्राप्ति में सीमाओ का बंधन नहीं मानती। वह सौन्दर्य को इस प्रकार आत्मसात कर लेना चाहता है कि निगाहो को भी अपने और मा'शूक के बीच बाधा समझता है (४२–९) इस स्थिति में स्पष्ट ही निगाह की सफलता भी उसे शाति प्रदान नही कर सकती और वह अपने अतृप्त हृदय की शाति के लिए तड़पता रह जाता है (१९३–६)। जब पीने पर आता है तो घड़े को प्याला बना लेना चाहता है (१३४–२) और जब गुनाहो पर आता है तो गुनाहो का सागर पानी की कमी से सूख जाता है (३८–६)। ग़ालिब की आनंद-तृष्णा का अति सुन्दर उदाहरण उर्दू की प्रसिद्ध ग़ज़ल "मुद्दत हुई है यार को मेहमॉ किये हुए" (२३४) और फ़ारसी की ग़ज़ल में मिलता है जहॉ वह अमूल्य मधुपात्र की गर्दिश से मृत्यु और मान्यताओ को भी बदल देना चाहता है। वह स्वच्छंद साहस के साथ अनुद्देश्य लालसा को भी आवश्यक समझता है (१८८–२) और एक अत्यंत मृदुल "लोलुपता" की मंजिल में पहुच जाता है। शायद यह बात जवानी की बेराहरवी ने सिखलादी थी कि आवारगी में अपमान तो होता है लेकिन तबी'अत सान पर चढ़ जाती है (२११–३)।

ग़ालिब की आवारगी और लोलुपता के गवाह उसके दिलचस्प पैमाने (मापदण्ड) है। रोने का पैमाना वह गुनाह जो किये नहीं गये (२३१–१०) थकन का पैमाना पूरे बयाबान का विस्तार भी नही (११) क्योकि जब बयाबान के बयाबान थकन से भर जाते है तो अभिरुचि की गति की लहरो पर पदचिन्ह बुलबुलो की तरह बहने लगते है और उसकी शान्ति के लिये दोजहान भी काफी नहीं है (१०३)। सारा सम्भावनाजगत कामना का केवल एक कदम मालूम होता है (जमीमः १२)। ग़ालिब का काव्य दूसरे क़दम की खोज है और यह खोज एक अविराम दुख, तड़प, जलन, कसक और गति में परिवर्तित हो गई है। "शौक-ए-अिनॉ गुसेख़्तः दरिया कहे जिसे" (२३०–९)

"शौक़" ग़ालिब का अत्यंत प्रिय शब्द है और इस परिवार के अन्य शब्द तमन्ना, आरज़ू और ख्वाहिश से उसकी कविता छलक रही है। जुनून

(उन्माद) जो शौक की अंतिम मंजिल है उसको सदा उकसाता रहता है। उसे ज्ञात है कि शौक अत्यंत विनम्रता में भी मानव को गर्वोन्नत कर देता है और कण को मरुस्थल का विस्तार और बूँद को सागर का आवेग प्रदान करता है (४३—३)। इसलिए शौक और तलब (तृष्णा) की राह में वह एक क्षण के लिए भी निश्चित नहीं होना चाहता। मंजिल से कही अधिक रस मंजिल की जुस्तुजू (तलाश) में है। "जब मैं बिहिश्त (स्वर्ग) का तसव्वुर (कल्पना) करता हूँ और सोचता हूँ कि अगर मग़फ़िरत (मुक्ति) होगई और एक कस्र (प्रासाद) मिला और एक हूर (अप्सरा) मिली अकामत (आवास) जाविदाँ (शाश्वत) है और इस एक नेकबख्त के साथ जिन्दगानी है इस तसव्वुर से जी घबराता है और कलेजा मुँह को आता है। हय, हय वह हूर अजीरन होजायगी। तबीयत क्यूँ न घबरायगी वही जमुर्रदी काख़ (पन्ने का घर) और वही तूबा (कल्पवृक्ष) की एक शाख"। (एक पत्र से उद्धृत)। और ग़ालिब के उस्ताद ने युवावस्था के आरंभ में यह नुक्ता सिखा दिया था कि शकर का मजा चख लेना मगर मक्खी बन कर शहद पर कभी न बैठना नही तो उड़ने की शक्ति बाकी नही रहेगी। इसीलिए ग़ालिब मंजिल का नही मंजिल के पथ का, तृप्ति का नहीं तृष्णा के रस का कवि है। प्यास बुझा लेना उसका उद्देश्य नही प्यास को बढ़ाना उसका आदर्श है।

रश्क बर तश्नः-ए-तन्हा रव-ए-वादी दारम्
न बर आसूदः दिलान-ए-हरम-ओ-जमजम-ए-शाँ

(ईर्ष्या मार्ग में अकेले भटकने वाले प्यासे से होती है न कि हरम-ओ-जमज्जम पर पहुँच कर तृप्त होजाने वालो से)। आरजू के डंक का आनंद रहगुजारो के आनंद से परिचित कराता है और इस चीज ने ग़ालिब की कविता को गति की भावना से भरपूर कर दिया है जिसका प्रकटीकरण मौज (तरंग) तूफ़ान, तलातुम (आवेग), शोला (ज्वाला), सीमाब (पारा), बर्क (बिजली) और परवाज (उडान) के शब्दो की बहुतायत से होता है। यह भाव रच-बस कर ग़ालिब के सौन्दर्यबोध का महत्वपूर्ण अंग बन गया है। अत:एव ग़ालिब का मा'शूक भी बर्क-ओ-शरर (बिजली और आग) है और ग़ालिब उसकी गति का उपासक (६१—९ व १९९—९)।

इसके साथ ग़ालिब की गतिवान और नर्त्तित इमेजरी [IMAGERY] है जो चित्राकन की पराकाष्ठा है। जब वह अपनी अछूती उपमाओ और अनुपम रूपको का जादू जगाता है तो हर अक्षर नृत्य करने लगता है। स्थिर चित्र तरल बन जाते हैं। एकाकी विचार रंग और सुगंध का एक आकार बनकर सामने आता है। अरण्य गति के उताप से जलने लगते हैं (७०—२), बयाबान पथिक के क़दमो के आगे-आगे भागने लगते है (१६१),

बेजान पत्थरों के सीने में अनगढ़ी मूर्तियाँ नृत्य करने लगती है (फारसी ग़ज़ल) आइनों के जौहर में पलके विकंपित हो उठती है (१८—४), मदिरा-पात्रो के हाथो की रेखाओ में रक्त दौड़ने लगता है (११२—१३), मा'शूक़ के वार्त्तालाप से दीवारो मे जान पड़ जाती है (१७४) और कद की मोहकता देखकर सर्व-ओ-सनोवर छाया की भाँति साथ-साथ घूमने लगते है (१७४—२) फलो की डालियाँ अँगड़ाई लेकर उन्मुख होने लगती है और फूल स्वयमेव गोश'-ए-दस्तार के पास पहुँच जाते है (७३—६) बस एक बिजली और आग और पारे की सी हालत होती है (१६४—३) और उम्र व्याकुलता की राहो पर चलती है और माह व वर्ष की माप सूर्य की गर्दिश के बजाय बिजलियो की चमक और तड़प से की जाती है (१९३)। ग़ालिब के यहाँ कल्पना के छलावे भी इसी यथार्थ की चुग़ली खा रहे है। कल्पना की छलाँग कहने के लिये एक कलात्मक विशेषता है किन्तु वास्तव में यह छिपी हुई व्याकुलता का प्रकट रूप है। चूँ कि वह बहुत सी बाते अनकही छोड़ देता है इसलिए शे'र दुरूह अवश्य हो जाता है लेकिन इससे शे'र का सौन्दर्य बढ़ जाता है और अर्थ का अँचल अधिक विस्तार धारण कर लेता है—

तू और आराइश-ए-खम-ए-काकुल
मैं और अंदेश:हा-ए-दूर-ओ-दराज (७२—२)

यह हर्ष और आनंद बटोरने, और दुख झेलने और कामना की कैफियते जो सिमटकर कमान और गति की कल्पना और विचारो के छलावो में परिणत हो गई है, आकस्मिक चीज नही है। निश्चय ही इसमे ग़ालिब के स्वभाव के तीखेपन और सूफ़ियाना शा'अिरी की उन परम्पाराओ का बड़ा हाथ है जो स्वस्थ है। लेकिन बात केवल इतनी ही नही है। ग़ालिब का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण भी यह तक़ाजा करता है कि वातावरण के प्रभावो से दृष्टिविमुख न हुआ जाय। दुनिया को "चेतना दर्पण" कहने वाला और उसके तमाशे पर जोर देने वाला शा'अिरी को क़ाफ़िय: पैमाई (तुकबन्दी) के बजाय अर्थपूर्णता का दर्जा देनेवाला और लेखनी के कम्पन पर बुद्धि के बन्धन लगाने वाला (मुग़न्नी नाम:) शा'अिर अपने वातावरण से अनभिज्ञ रह कर केवल अपने खून-ए-दिल के उछालने पर सन्तुष्ट नही होसकता था—

चाक मत कर जैब बे अय्याम-ए-गुल
कुछ उधर का भी इशारा चाहिये [१९०—४]

जब वह कहता है कि अंजुमन-ए-आर्जू (कामना की महाफिल) से बाहर साँस लेना भी हराम है (५७) तो यह केवल चन्द सिक्को, चन्द प्यालो और चन्द चुम्बनो की आरज़ू नहीं है बल्कि एक अरचित-उद्यान की कामना है जिसकी कल्पना के आनन्द ने गीत छेड़ने पर मजबूर कर दिया है

(जमीम: २१) और उस अरचित उद्यान को केवल निजी इच्छा का उद्यान समझ लेना, ग़ालिब का अपमान है। इसमें सामाजिक संभावनाओ की कल्पना इसलिए सम्मिलित है कि गालिब के पास सामाजिक प्रगति का एक उत्तम विचार मौजूद था और निर्माण की अभिलाषा उसके दिल का सबसे बड़ा दर्द (१३६)। ग़ज़ल के किसी शे'र के संबंध में यह कहना कि उसका वास्तविक प्रेरक क्या था, कठिन है क्योकि उसपर रूपको के आवरण पड़े होते है (६०—६, ७)। लेकिन ग़ालिब ने अपने पत्रो मे ग़दर [१८५७] की तबाही के बाद देहली के जो हृदय विदारक मर्सिये लिखे हैं उन्हीमें एक जगह यह हसरत-ए-तामीर [निर्माण की अभिलाषा] का शे'र भी लिखा हुआ नज़र आता है—"दिल्ली का हाल तो यह है—

घर में था क्या कि तिरा ग़म उसे ग़ारत करता
वो जो रखते थे हम इक हसरत-ए-ता'मीर सो है" [१३६]

इन छः शब्दों और दो पंक्तियों के पीछे ग़ालिब के विचारो की एक दुनिया आबाद है जो ग़ालिब के पत्रो में देखी जासकती है। १८५७ से बहुत पहले ग़ालिब ने यह अनुमान कर लिया था कि मुग़ल संस्कृति और समाज का दीप अब सदा के लिए बुझनेवाला है। यद्यपि इसकी प्राचीन मान्यताएँ ग़ालिब को बहुत प्रिय थीं लेकिन उसे यह भी ज्ञात था कि इमारत बेबुनियाद हो चुकी है और जड़े खोखली है। हवा का कोई भी झोंका उसे गिरा सकता है। ग़ालिब के निजी हालात भी इससे मिलते जुलते थे। जो सोग घर में था वही आगरे और देहली पर छाया था और दोनो ने मिलकर ग़ालिब को युवावस्था के आरंभ ही से उदास कर दिया था।

लेकिन इसीके साथ ग़ालिब ने उस नयी दुनिया की झलक देख ली थी जो विज्ञान और उद्योग की प्रगति के साथ आ रही थी वह अंग्रेज्जी पूँजीवाद की शोषण-शक्ति का अनुमान न लगा सका (और यदि लगाया हो तो उसका सुबूत नहीं मिलता) लेकिन अँग्रेज्जों के लाये हुए विज्ञान और उद्योग ने उसे इतना प्रभावित किया कि जब ग़दर से कई वर्ष पहले सर सैयद अहमद खाँ ने अबुल फ़ज़्ल की "आईन-ए-अकबरी" का परिशोधन किया और ग़ालिब से उसकी समीक्षा लिखने की इच्छा प्रकट की तो गालिब ने ग़ज़ल के रूपको के सारे आवरण अलग रखकर कर स्पष्ट शब्दो में कह दिया कि आँखें खोल कर साहिबान-ए-इंग्लिस्तान को देखो कि ये अपने कला-कौशल में अगलो से आगे बढ़ गये हैं। उन्होंने हवा और लहरो को बेकार करके आग और धुएँ की शक्ति से अपनी नावें सागर में तैरा दी है। यह बिना मिज़राब के सँगीत उत्पन्न कर रहे है और उनके जादू से शब्द चिड़ियो की तरह उड़ते है, हवा में आग लग जाती है और फिर बिना दीप के नगर आलोकित हो जाते है।

इस विधान के आगे बाक़ी सारे विधान जीर्ण हो चुके है। जब मोतियो का ख़ज़ाना सामने हो तो पुराने खलियानो से दाने चुनने की क्या आवश्यकता है। यह कहने के बाद ग़ालिब ने जो निष्कर्ष निकाला है वह महत्वपूर्ण है। आईन-ए-अकबरी के अच्छा होने में क्या संदेह है, लेकिन उदार सृष्टि को कृपण नहीं समझना चाहिए क्योकि गुणो का कोई अन्त नही है। ख़ूब से ख़ूब-तर का क्रम जारी रहता है। इसलिए मृतकोपासना शुभ कार्य नही है (फ़ारसी मसनवी नं १०)।

इसके बाद कोई संदेह नही रह जाता कि ग़ालिब के पास समाज-विकास का एक उत्तम आदर्श था और वह अकबर-कालीन विधान की तुलना में नये औद्योगिक विधान को प्रधानता देता था और विज्ञान के आविष्कारो और विचारो को शा'अिरी मे स्थान देने के पक्ष में था (खुतूत—मेहर ५४८)। ग़ालिब के लिए यह अनुमान लगाना कठिन था कि इस नयी व्यवस्था के सामाजिक सम्बंध क्या है और इसकी प्रकृति में किस प्रकार की विनाशकता है। लेकिन इसका एक शे'र ऐसा अवश्य है जो एक क्षण के लिए चौंका देता है—

ग़ारतगर-ए-नामूस न हो गर हवस-ए-ज़र
क्यों शाहिद-ए-गुल बाग़ से बाजार में आवे (१७४—८)

ग़ज़ल गीतिमय (ग़िनाई, LYRICAL) और आतरिक (SUBJECTIVE) काव्य की पराकाष्ठा है। इसलिए इसके शे'रो में व्यक्तिगत मनोभाव और सामाजिक व्याकुलता के मध्य सीमा निर्धारित करना कठिन है, फिर भी यह अनुभव कर लेना कठिन नहीं कि ग़ालिब अपने युग से अत्यंत निराश था। इस निराशा में निजी असमर्थताओं (नारसाइयों) और समाजी विवशताओ ने मिलकर एक कैफ़ियत पैदा करदी थी। ग़ालिब को जिन्दगी जिस तरह भुगतनी पड़ी वह एक भावुक हृदय का ख़ून करदेने के लिए काफ़ी है। पाँच वर्ष की आयु में बाप का और आठ-नौ वर्ष की आयु में चचा का साया सर से उठ गया। एक संपन्न ननिहाल में माँ के बेरंग आँचल के नीचे बचपन व्यतीत किया और आरंभिक युवावस्था की चंदरोजा फ़ुरसत-ए-गुनाह के बदले उम्र भर की असफलता, विफलता, उत्ताप और जलन मिली। अठारह-उन्नीस वर्ष की आयु से जीवन की निर्ममताओं का सामना करने के लिए अकेले मैदान में उतरना पड़ा। आय का कोई साधन नहीं था। बाप और चचा की मृत्यु के बाद जो जागीर पालन-पोषण के लिए थी उसका अधिकाश लोग खा गये और ग़ालिब उम्र भर हाथो में अर्जियाँ और क़सीदे लिये हुए देहली, लखनऊ, कलकत्ता, कानपुर, दर—बदर ठोकरे खाता फिरा, अयोग्य धनवानों और अंग्रेज अफ़सरो की झूठी प्रशंसा में हृदय-रक्त उगला और उसके बाद भी क़र्ज़ की शराब पी और भीख पर जिन्दगी गुज़ारी। मरते समय [दिल्ली, १५ फरवरी १८६९] भी यह कटु अनुभूति

साथ थी कि विधवा पत्नी पर ग़रीबी और निर्धनता में क्या बीतेगी। यह भी हुआ कि ऋणदाताओं की नालिश और डिग्रियो के डरसे घर में छिपकर बैठना पड़ा और किसी शत्रु के षड़यंत्र से जुए (शतरंज और चौसर) की लत में क़ैदख़ाने का अपमान सहन करना पड़ा। मुग़ल दरबार में, जिसकी बहार लुट चुकी थी, वह आदर-पद भी न मिला जो निम्नतर कोटि के कवियो को प्राप्त हो रहा था और आयु के अन्तिम चरण में एक बौद्धिक वाद-विवाद के अपराध में बरसों माँ-बहन की गालियाँ खानी पड़ीं। युवावस्था में युवती प्रेयसी का जनाज़ा आँखों के सामने उठ गया जिसकी अदाएँ उम्रभर तड़पाती रही। घर में बच्चों के खेल-कूद के बजाय उनकी लाशें नज़र आयी। जिस भाजे को गोद लिया था वह जवान मर गया, दिल्ली आँखो के सामने उजड़ी, बंधु-बाधव आँखों के सामने क़त्ल हुए, समकालीन कवि और विद्वान फाँसियो पर चढ़ा दिये गये और काले पानी भेज दिये गये और ग़ालिब के लिए "मातम-ए-यक शहर-ए-आरज़ू" (कामना नगरी का शोक) (१७–२) के अतिरिक्त कुछ बाक़ी नहीं रह गया। इन हालात में वह यही कहने पर विवश था—

न गुल-ए-नग़्मः हूँ न पर्दः-ए-साज़
मैं हूँ अपनी शिकस्त की आवाज़ [७२]

ग़ालिब को यह दुख था कि "कलंदरि-ओ-आज़ादगि-ओ-ईसार-ओ-करम" (स्वतंत्रता, त्याग और उदारता) के जो जौहर उसको मिले थे वह प्रकट न होसके। "अगर तमाम 'आलम में न होसके न सही, जिस शहर में रहूँ उस शहर में तो भूखा-नंगा नज़र न आये। ख़ुदा का मक़हूर (कोप-भाजन) ख़ल्क का मरदूद (बहिष्कृत) बूढ़ा, नातवान (दुर्बल), बीमार, फ़क़ीर, नकबत (दरिद्रता) में गिरफ़्तार मेरे और मुआमिलात-ए-कलाम-ओ-कमाल (कविता और गुण) से क़त्'-ए-नज़र करो (अनदेखा करो)। वह जो किसी को भीख माँगते न देख सके और ख़ुद दर-बदर भीख माँगे वह मैं हूँ" (एक ख़त)। इस ख़त के पीछे ग़ालिब का मानव के संबंध में विचार काम कर रहा है जिसको उसने अपने एक फ़ारसी क़सीदे (२६) में भी प्रस्तुत किया है। एक और जगह कहता है कि ख़ुदा ने सिर्फ़ ईमान की ज्योति जगाई है। सभ्यता और शहरों का शृंगार तो मनुष्य से है (ज़मीम: ३४)। जब उस मनुष्य का अपमान ग़ालिब से सहन न होसका तो कभी तो ख़ुदा से फ़रियाद की कि आज हम इतने पतित क्यों हैं (६९–६) और कभी यह कह कर दिलको दिलासा दे लिया—

आराइश-ए-ज़माना जि बेदाद करदः अन्द
हर ख़ूँ कि रेख़्त ग़ाज़:-ए-रू-ए-ज़मीं शनास

(ज़माने का शृंगार अत्याचार से किया गया है और जो भी रक्त प्रवाहित

किया गया है वह धरती का अंगराग बन गया है)।

निराशा का स्वर ग़ालिब की अनगिनत ग़जलों और शे'रों में मिलता है। वह उसकी अत्यंत सहज और प्रभावशाली रचनाएँ हैं जो दिल से एक चीख बनकर बाहर निकली है (२१, १६१, १६२, १६३, २१६)। ये आहों की तरह प्रकट शृंगार से अरंजित हैं। लेकिन ग़ालिब का महान व्यक्तित्व उसकी निराशा को केवल भावुकता के स्तर से उठाकर बुद्धि और ज्ञान के स्तर पर ले आता है और ग़ालिब लड़ने के लिये अपने हथियार सम्भाल लेता है और अपनी तल्ख़ नवाई [कटु वाणी] को व्यंग में बदल देता है।

क्या वह नमरूद की खुदाई थी
बन्दगी में मिरा भला न हुआ (२७—६)

वह अत्यन्त कठिन अवस्था में भी जी खोल कर हँसना जानता है। इसपर ग़ालिब के अनगिनत चुटकुले और पत्र गवाह है कि उसने भूख, मौत, अपमान, हर चीज का सामना एक मर्दाना ज़हरीली हँसी से किया। व्यंग के तीर विफलता और असन्तोष के विषय में बुझाये जाते है और आत्मविश्वास और अहं के धनुष से फेंके जाते है। प्रकटत: यह खुशदिली की मामूली सी क्रिया मालूम होती है लेकिन वास्तव में वह एक ढाल थी जिसका ग़ालिब ने जमाने के वारों से बचने के लिये उपयोग किया। इस खुशदिली की छाप ग़ालिब की शा'अिरी पर पड़ रही है [८०—२, ९२—३, १०९, १२७—४, १७९, २०२, २२०]। वह व्यंग और हास्य की छलनी मे खून के आसुओ को छान देता है और छलनी के भीगे हुए छेदो पर असंख्य मुस्कुराते हुए होठो का भ्रम होता है।

की मिरे कत्ल के बा'द उसने जफ़ा से तौब:
हाय उस ज़ूद पशेमाँ का पशेमाँ होना
(१८—८)

यह फित्न: आदमी की खाना वीरानी को क्या कम है
हुए तुम दोस्त जिसके दुश्मन उसका आस्माँ क्यो हो (१२७-८)

यह बड़ा तीखा व्यंग है जो हँस-हँस कर ज़ख्म खाने का सामर्थ्य प्रदान करता है। और इस सामर्थ्य ही में ग़ालिब के आत्मसम्मान और व्यक्तित्व [INDIVIDUALITY] का भेद छुपा हुआ है जिसे जमाने की विपत्तियो ने अहं और आत्मश्लाघा मे बदल दिया—

जमान: सख्त कम आज़ार है, बजान-ए-असद
वगरन: हम तो तवक्को'अ जियाद: रखते हैं (११०)

यह अधिक मज़बूत ढाल थी। इसके बिना संसार के दुखो का सामना सम्भव नहीं था। ग़ालिब के अहं ने कभी किसी की परवा नही की। न प्रेम-

सतांप के सामने उसका सर झुका न जग-संताप के। मजनूँ हो या फ़रहाद, ख़िज़्र हो या सिकन्दर, ज़माना हो या ख़ूबान-ए-दिल आज़ार [दुख देनेवाला मा'शूक] कोई ग़ालिब की आँखो में नहीं समाता। वह खुदा की बन्दगी में भी मनमौजी और अभिमानी रहा [२३—२] और बेवफ़ाओ के 'अिश्क़ में भी [१२७—४] उसका सबसे अधिक सुन्दर विवरण इस ग़ज़ल में है—
" बाज़ीच:-ए-अत्फ़ाल है दुनिया मिरे आगे " [२०६]

यह शान कसीदो में भी बाकी है, यद्यपि यह ग़ालिब की शा'अिरी और जीवन का कमज़ोर पहलू है। लेकिन यह स्वीकार न करना ज़ुल्म होगा कि मजबूर होकर उसने अपना हाथ ज़रूर फैलाया मगर इसको सदा ज़लील पेशा समझता रहा, और एक जगह अफ़सोस किया है कि आधी शा'अिरी अपात्रो की प्रशंसा में व्यर्थ होगई। यही कारण है कि क़सीदो का प्रशंसात्मक अंश कमज़ोर है और तशबीब [आरंभिक भाग] अत्यंत काव्यमय। ग़ालिब को इसका एहसास था कि जिसकी प्रशंसा कर रहा हूँ उससे मेरा दर्जा ऊँचा है इसलिए उसने कहीं कहीं स्वयं अपनी प्रशंसा का पहलू निकाल लिया है।

ग़ालिब का अंतिम आश्रयस्थल उसका अनुध्यान और कल्पना है क्योंकि "निर्धनो के जीवन का आधार कल्पना पर है" (एक ख़त)। इस जगत में पहुँचकर वह विश्व पर राज्य करने लगता है और जीवन के हर अभाव की पूर्त्ति कर लेता है। यह स्वप्नो का संसार है और यहाँ स्वप्नो का निर्माण करनेवाले के अतिरिक्त किसी का शासन नही चलता। यहाँ बादशाह अजगर मालूम होने लगते है और शा'अिर पैग़म्बर हो जाता है और जिब्रईल (ख़ुदा का संदेश लेकर आनेवाला फ़रिश्ता) "नाक़:-ए-शौक़ का हुदीख़्वान" (अपने गीत से शौक़ को आगे बढ़ानेवाला)। यहाँ निर्दयता नहीं है केवल करुणा है। अपूर्ण कामनाएँ नही है केवल कामनापूर्ति का हर्ष है, क़दहसाज़ी (प्याले बनाना) और साक़ीतराशी [साकी गढ़ना] है। प्यास जितनी बढ़ती है सागर का उबाल भी उतना ही बढ़ता है। बुरे हालात में जीने का हौसला जाग उठता है और जिगर का ख़ून पीकर चेहरे की ताज़गी बढ़ जाती है (अब्र-ए-गुहरबार)। अनुध्यान अरचित उद्यानो से कुसुमचयन करता है और बहारो के गीत गाता है। इस दुनिया मे केवल गति और उड़ान है और आगे बढ़े जाने का मस्ताना अमल, "ता बाज़गश्त से न रहे मुद्द'आ मुझे" (१९०—३)।

ग़ालिब की ये सारी विशेषताएँ मिलकर उसके प्रेम के दृष्टिकोण को ऐसा रूप देती है जिससे पहले उर्दू शा'अिरी अपरिचित थी। सौन्दर्य के असीम आकर्षण के सामने, जिसमें अफ़लातूनियत कम है और जिस्मानियत (शारीरिकता) अधिक, अत्यधिक समर्पण और श्रद्धा के बावुजूद ग़ालिब का

'अिश्क स्वाभिमानी और मस्तकोन्नत है। जीवन के लिए यदि यह नियम है कि जो नाल: (आर्त्तनाद) होंठो तक नही आया वह सीने का दाग़ बन गया (२३–५, ११६, १२२–६, १४६–८, १६४–९, १६७, २१२–२) इसलिए दुख के सहन का साहस कम होना चाहिये और क्रोध का आवेग अधिक (फ़ारसी शे'र) तो 'अिश्क के लिए यह नियम कि:—

'अिज्ज-ओ-नियाज से तो वह आया न गह पर
दामन को उसके आज हरीफ़ान: खैंचिये (जमीम: ३८–२)

उर्दू ग़जल की सांकेतिकता का तकाजा यह है कि केवल मा'शूक़ को नही बल्कि हर आदर्श को चाहे वह नये जीवन की कामना ही क्यो न हो इसी तरह दामन खेंच कर प्राप्त किया जासकता है। शायद यही कारण है कि ग़ालिब ने अपने आप को आईन-ए-ग़जलख्वानी (काव्य-शास्त्र) में गुस्ताख़ (धृष्ट और अशिष्ट) कहा है (१७८–१२)।

इससे उर्दू शा'अिरी को एक नया मिज़ाज (स्वभाव और स्वर) मिला जिसके स्वाभिमान में हल्के से विद्रोह का सम्मिश्रण है। यह कभी तशकीक (शंका) के रूप में उभरता है और कभी व्यंग के और कभी कल्पना की कमंदें बन जाता है। ग़ालिब के समकालीन इस मिज़ाज को नही समझ सके जो ख़ून के घूँट पीकर मुसकुराता है और जीवन तथा मानव को नयी गरिमा प्रदान करता है। ग़ालिब से पहले ख़ुदा और मा'शूक पर किसने व्यंग किया था, दुख-सहन के बाँध किसने तोड़े थे, जुल्म-ओ-सितम (अन्याय और अत्याचार) की चलती हुई तलवार को अपनी व्याकुलता के सागर की रक्त-तरंग किसने बनाया था (१३३–५), किसने ग़जल की भावना में विचार का इतना अधिक सम्मिश्रण किया था, किसने ग़जल और क़सीदे की भाषा का अंतर मिटाकर नयी नज्म (आधुनिक काव्य-शैली) की बुनियादें रखी थीं (इसीलिए ग़ालिब की ग़जल का स्वर मीर के स्वर से ऊँचा है)।

१९ वी शताब्दी के अंत और २० वी शताब्दी के आरंभ मे ग़ालिब की लोकप्रियता में जो अभिवृद्धि हुई है उसमें और बातो के अतिरिक्त इस नये मिज़ाज का भी योग है। यह स्वतंत्रता की चेतना से जागृत नये हिन्दोस्तान के नये मिज़ाज से एकस्वर है, जिसे विगत वैभव पर गर्व भी है और दुख भी है और नयी महानता की तलाश भी। ग़ालिब ने राजनीतिक कविता नही की लेकिन नये युग के मिज़ाज को समो लिया। और जब नये तूफ़ान से खेलनेवाले आये तो उन्होने प्रलयंकारी तरंगो से लड़ने के लिए गालिब की शा'अिरी से शक्ति प्राप्त की "ग़ालिब की कला के कारण ग़जल प्रेम-वर्णन से बढ़कर जीवन-वर्णन बनती है और जीवन के विभिन्न युगो, करवटो और क्रांतियो का साथ देने लगती है" (आले अहमद सुरूर)।

यह आकस्मिक बात नही है कि उर्दू की पुरानी शा'अिरी से विद्रोह करनेवाला हाली ग़ालिब का शिष्य था और नयी शिक्षा पर बल देनेवाला सर सैयद ग़दर से पहले नये विज्ञान और उद्योग की प्रशंसा ग़ालिब से सुन चुका था। और यह भी आकस्मिक बात नही है कि देशभक्त शिबली की ग़ज़लों मे ग़ालिब की प्रतिध्वनि है और इक़बाल के चितन और कला पर ग़ालिब के चितन और कला के सूर्य की किरणे पड़ रही है। जोश मलीहाबादी से लेकर आज के शा'अिरो तक कोई ऐसा नहीं है जो किसी न किसी रूप मे ग़ालिब से प्रभावित न हो। ग़ालिब के अनगिनत शे'र उत्तरी भारत के लोगो की जबान पर चढ़े हुए है और उर्दू जाननेवाला शायद ही कोई घर दीवान-ए-ग़ालिब से ख़ाली हो।

आज हमारे हाथ में ग़ालिब की शा'अिरी दो युगो की तर्जुमान बन कर आयी है। उसमे एक युग का मदिरालस और दूसरे युग की मादकता है, जाती हुई रात की वेदना और उदीयमान उषा का हर्ष मिश्रित होगया है।

ग़ालिब की महानता केवल इसमें नहीं है कि उसने अपने युग की आतरिक व्याकुलता को समेट लिया बल्कि इसमें कि उसने नयी व्याकुलता पैदा की। उसकी शा'अिरी अपने युग के बंधनो को तोड़ देती है और भूत और भविष्य के विस्तार में फैल जाती है। ग़ालिब ने अपने हर अनुभव को जो एक अत्यंत मृदुल सौन्दर्यबोध रखनेवाले मस्तिष्क की प्रक्रिया थी, मानवी मनोविज्ञान की आग में तपाकर पिघलाया है, व्यापक नियम की कसौटियो पर कसा है और फिर काव्य के रूप में ढाला है। तब उसके यहाँ एक विश्व कवि का स्वर पैदा हुआ है और वह जीवन के हर क्षण का कवि बन गया है। वह मानव-आत्मा की बहुरंगी अवस्थाओ से परिचित है। अत्यधिक हर्ष हो या अत्यधिक निराशा, शंका की दशा हो या कल्पना की जादूगरी हो, दर्शन की गूढ़ समस्याएँ हो या अत्यंत निम्नकोटि की वस्तुएँ, चुम्बनों की मादकता हो या अलिगन का आनंद, हर स्थिति में ग़ालिब की शा'अिरी साथ देगी। निम्नतर कोटि के कवि उसकी किसी एक अदा को अपना विचार-दर्शन बना सकते हैं, लेकिन ग़ालिब एकसाथ अपनी सारी अदाओ का जादू डालता है।

इस शा'अिरी का रसास्वादन कर सकने के लिए केवल शाब्दिक अर्थों का ज्ञान पर्याप्त नही है। शे'रो को बार-बार पढ़ना भी आवश्यक है। फिर शब्द अक्षरो के समूह के रूप मे नहीं बल्कि चित्रो के रूप में पहचाने जायेगे। मनुष्यो के चेहरो की तरह वे धीरे-धीरे सुपरिचित बनेगे और अपना व्यक्तित्व प्रकट करेगे। फिर शब्दो की ध्वनि का लोच महसूस होगा और उनके परस्पर टकराव की झनकार से कान परिचित होगे। तब जाकर अर्थ-संगीत और आतरिक स्वर के द्वार खुलेगे। इस तरह शाब्दिक अर्थों से गुजरकर काव्यात्मक अर्थों तक

पहुँचने का पथ मिलेगा। और उल्लासजनित मत्तता की वह अवस्था प्राप्त होगी जहाँ वफ़ा (प्रेम-निर्वाह) का शब्द मा'शूक की ज़ुल्फों (अलकों) की तरह सुरभित हो उठेगा और सर्व-ए-चरागाँ (दीप-सज्जित वृक्ष) नृत्य करता नजर आयेगा 'अिश्क (प्रेम) अभिरुचि और आचारण बन जायगा, प्रेयसी का सौन्दर्य सृष्टि के सौन्दर्य में परिणत हो जायगा, नाज़ (रूप-गर्व) वह आदर्श बन जायगा जिसकी प्राप्ति के लिए तन-मन की बाजी लगाना सुरुचि का परिचायक है, शमशीर-ओ-सिनाँ (तलवार और बर्छी) का तेज और अंदाज़-ओ-अदा (हाव-भाव) की सुन्दरता प्रकट होगी, फ़िराक (विरह) का दर्द कामना की मृदुलता में परिणत हो जायगा और विसाल (मिलन) तृष्णा के आनंद की परितृप्ति में; शौक (आकांक्षा) एक निर्माण-शक्ति बनकर उभरेगा और दश्त-ओ-सहरा (मैदान और जंगल) संभावनाओं का विस्तार धारण करलेंगे, जुनून (उन्माद) जिज्ञासा बन जायगा जिसकी राहें कभी जिन्दाँ (कारागार) की जंजीरें रोकेंगी और कभी दैर-ओ-हरम (मन्दिर और मस्जिद) की दीवारें, जिन्होंने अपने अन्दर लालसा की थकन को सजा रखा है; (ज़मीमः २०—२) और मैखानः (मदिरालय) पूर्ण मानवता और पूर्ण स्वतंत्रता की मंजिल बनकर सामने आयगा। फिर दीवान-ए-ग़ालिब के हर पृष्ठ पर उसकी कल्पना की सृष्टि अँगड़ाइयाँ लेने लगेगी, उसके सरापा नाज़ महबूब आँखों के सामने मुस्कुरायेंगे और दुनिया ज्यादा खूबसूरत होजायगी और मानव अधिक आदरणीय।

✿ ✿ ✿

प्रचलित दीवान-ए-ग़ालिब वास्तव में ग़ालिब के उर्दू काव्य का संग्रह है जिसके कई संस्करण गालिब के जीवनकाल में प्रकाशित हुए। मैंने इस संस्करण के लिए श्री मालिक राम द्वारा सम्पादित दीवान का उपयोग किया है जिसका मूल मतबः-ए-निजामी कानपुर के संस्करण (१८६२ ई०) पर आधारित है। और इसका संशोधन स्वयं ग़ालिब ने किया था।

मैंने केवल ग़ज़लें मूल-क्रम के साथ बाकी रखी हैं और ज़मीमे (परिशिष्ट) में भी दो कत'ओं के 'अलावः बाकी अश'आर ग़ज़लों के ही हैं।

'आम तौर से उर्दू लिखावट में विरामचिन्हों और मात्राओं का रिवाज नहीं है। और 'अिबारत अटकल से पढ़ी जाती है इसलिए दीवान-ए-ग़ालिब के विभिन्न संस्करणों में कुछ इज़ाफ़तों में विरोध मिलता है, जो या तो दीवान सम्पादित करनेवालों ने जल्दी में लिखदी है या कातिब ने सजावट के लिए लगादी है। मालिक राम ने विरामचिन्हों के मु'आमले में बड़े परिश्रम और सावधानी से काम लिया है लेकिन ऐ'राब लगाने में उन्होंने भी इतनी सावधानी नहीं बरती। मैंने विरामचिन्ह ज्यों के त्यों रखे हैं लेकिन कुछ इज़ाफ़तों

के मु'आमले में विरोध किया है। उदाहरण के लिये मालिक राम के यहाँ और कुछ दूसरे संस्करणो में "जोश-ए-क़दह से बज्म-ए-चराग़ाँ किये हुये" लिखा है। मैंने बज्म की इज़ाफ़त बाकी नहीं रखी। इसी तरह "चश्म-ए-दल्लाल जिन्स-ए-रुस्वाई" के बजाय मैंने 'चश्म, दल्लाल-ए-जिन्स-ए-रुस्वाई' लिखा है। लेकिन यह बात केवल चन्द शे'रो तक सीमित है।

उच्चारण का प्रश्न भी महत्वपूर्ण है। विदेशी भाषाओ के चन्द शब्द उर्दू भाषा में आकर बिगड़ चुके है। चूँकि इस तरह वह उर्दू के शब्द बन गये है इसलिए मैं साधारणतः बोलचाल के उच्चारण (तद्भव) को मूल फ़ारसी या 'अरबी उच्चारण (तत्सम) पर प्रधानता देता हूँ। यही कारण है कि मैंने सुवाल को सवाल, गिरिफ़्तार को गिरफ़्तार और निश्तर को नश्तर लिखा है। ऐसे शब्दो मे भी जिनके दो उच्चारण है, मैंने बोलचाल के उच्चारण को बेहतर समझा है। इसकी कसौटी मेरा निजी ज्ञान है। इसलिये 'अज्ज पर 'अिज्ज को और सिताइश पर सताइश को प्रधानता दी है लेकिन इतनी सावधानी बरती है कि हिन्दी शब्दावली में कोष्ठक के अन्दर दूसरा उच्चारण भी लिखदिया है। मैंने कुछ शब्द जैसे ख़ज़ाँ, चराग़ और नशात को नही बदला है लेकिन मेरा विचार है कि उर्दू में ख़िज़ाँ, चिराग़ और निशात प्रचलित है और उनका इसीतरह प्रयोग करना चाहिये। यह दूसरा प्रश्न है कि स्वयं ग़ालिब ने क्या उच्चारण किया। जब तक इसकी छानबीन न की जाय उस समय तक हम निजी रुचि की कसौटी का प्रयोग करने पर बाध्य है।

नागरी लिपि में उर्दू काव्य और साहित्य का एक बड़ा भाग प्रकाशित हो चुका है। लेकिन उर्दू को नागरी लिपि में परिवर्तित करने के प्रश्न पर पूरी तरह विचार नही किया गया। प्रारम्भ में यह असावधानी स्वाभाविक थी, लेकिन अब, जबकि हिन्दी हिन्दुस्तान की राष्ट्रभाषा बन चुकी है और उसको देवनागरी लिपि द्वारा हिन्दुस्तान की विभिन्न भाषाओं की पूँजी को अपने दामन में समेटना है तो यह आवश्यक है कि लिपि के प्रश्नो पर साहित्यिक और वैज्ञानिक रूप से विचार किया जाय और दूसरी भाषाओ की आवाज़ो को व्यक्त करने के लिये नयी 'अलामते और संकेत अपनाये जाये। यह जीवित भाषाओ की विशेषता है और नागरी लिपि पहिले भी क, ख, ग, ज और फ के नीचे बिन्दी लगाकर अपने जीवित होने का सुबूत दे चुकी है।

उर्दू साहित्य हिन्दी साहित्य से सब से अधिक निकट है और दोनों की बोलचाल की भाषा और स्थान एक ही है। लेकिन फिर भी उर्दू में कुछ ऐसी विशेषतायें है जो हिन्दी से भिन्न हैं जैसे 'अत्फ़ और इज़ाफ़त।

'अत्फ़ दो या दो से अधिक शब्दो या वाक्यो को मिलाने का काम देता है। 'अत्फ़ के बहुत से अक्षर हैं लेकिन यहाँ पर केवल उस वाव (و) से

बहस है जो और के अर्थ मे प्रयुक्त होता है। जैसे "गुल और बुलबुल" की जगह गुल-ओ-बुलबुल।

इजाफत एक शब्द से दूसरे शब्द का सम्बन्ध प्रकट करती है। इजाफत की 'अलामत जेर से लिखी जाती है जो अक्षर के नीचे लगाया जाता है और उसके प्रयोग से गुल का रँग "रँग-ए-गुल" और ग़ालिब का दीवान "दीवान-ए-ग़ालिब" हो जाता है।

नागरी मे 'अत्फ़ और इजाफत के लिखने के जो तरीके प्रचलित है, वह दोषपूर्ण है। उनसे शब्दो का मूल-रूप बिगड़ जाता है और कभी कभी अर्थ का अनर्थ हो जाने की आशंका होती है। जैसे साधारणत: "गुल और बुलबुल" को लिखने के लिए "गुलो बुलबुल" लिखा जाता है या गुल व बुलबुल। एक मे गुल का रूप बिगड गया है और दूसरे मे उच्चारण की अशुद्धि की सम्भावना है।

इस दीवान मे 'अत्फ के वाव (و) के लिए -ओ- की 'अलामत अपनाई गई है और "गुल-ओ-बुलबुल" लिखा गया है।

इजाफ़त के लिए -ए- की 'अलामत अपनाई गई है। और दीवाने ग़ालिब के बजाय जिसका अर्थ पागल गालिब भी हो सकता है, "दीवान-ए-ग़ालिब" लिखा गया है। इस तरह शब्द का मूल-रूप बाकी रहता है और इजाफत का जेर ये (ے) में नही बदलता।

उर्दू के तीन अक्षरो के लिए भी नये चिह्नो से काम लिया गया है। एक ज़्श (ژ) दूसरे 'अैन (ع) और तीसरे छोटी हे (ہ)

जिस अक्षर को उर्दू में (ژ) लिखते है उसकी आवाज हिन्दी में मौजूद नही है यह ज और श के बीच की आवाज है। इसलिए श के नीचे बिन्दी लगादी गई है (श़)

'अैन (ع) की आवाज उर्दू में अलिफ़ (ا) की आवाज से मिल गई है इसलिए नागरी लिपि मे साधारणत: दोनो अक्षरो को एक ही तरह लिखा जाता है। जिन शब्दो के आरम्भ में 'अैन आता है उन मे कोई बाधा नहीं आती। जैसे "आशिक" और "औरत"। लेकिन जिन शब्दो के अन्त में या बीच में 'अैन आता है वहाँ उसकी अलग आवाज का प्रकट करना आवश्यक हो जाता है। कभी कभी 'अैन अलिफ के साथ भी आता है। जैसे 'आदत या विदा'अ। इस जगह लिखावट में 'अैन को अलिफ़ से अलग करने की जरूरत पडती है। यही कारण है कि इस दीवान में अलिफ़ (ا) के लिए (अ) और 'अैन (ع) के लिए ('अ) की 'अलामत प्रयोग की गई है।

'अैन दूसरे अक्षरो की तरह गतिवान भी आता है और गतिहीन भी। गतिवान 'अैन के लिखने मे कोई कठिनाई नही आती और उसे हर जगह

सब आवाजों को व्यक्त करने मे समर्थ नहीं है क्योकि मानव मस्तिष्क की तरह मानव कंठ भी असीमित योग्यता का मालिक है। उर्दू के वे शब्द जिनका दूसरा अक्षर बड़ी हे (ح) हो और यह हे (ح) गतिहीन हो और पहले अक्षर पर जबर हो तो उसे जबर नही बोला जाता बल्कि उस की आवाज जबर और जेर के बीच में होती है। जैसे अह्‌मद, मह्‌बूब, बह्‌र, वह्‌शत वग़ैर:। इनका उच्चारण करते समय पहले अक्षर को हमेश: अ और ए के बीच बोलना चाहिये। कभी कभी छोटी हे (ہ) के शब्दो के साथ भी यही होता है। जैसे क़ह्‌र।

उर्दू की एक और विशेषता यह है कि शा'अिरी में कुछ शब्दो की याये मज्हूल (मोटी आवाज देनेवाली ये) को ख़ारिज करके उसे जेर से बदल दिया जाता है। इस तरह आवाज छोटी हो जाती है। उदाहरण के लिए एक (ایک) और मेरे (میرے) से जब याये मज्हूल ख़ारिज होती है तो 'ए' की आवाज छोटी हो जाती है। और इसे (اک) और (مرے) लिखा जाता है। नागरी मे इस आवाज को जो वास्तव मे जेर की खालिस आवाज है, व्यक्त करने का कोई तरीक. नही। इसलिये मजबूरन ऐसे स्थानो पर इ की अलामत प्रयोग मे लाई गई है। जैसे (इक) और (मिरे) यही सूरत कही कहीं वाव के साथ भी पेश आती है जहाँ उसकी पूरी आवाज कट कर पेश की आवाज मे बदल जाती है। जैसे कोहसार کوہسار से کہسار इसको मजबूरन (कुहसार) लिखा गया है।

मेरी राय यह है कि नागरी लिपि की मात्राओ में उर्दू के जेर (ِ) और पेश (ُ) को सम्मिलित कर लेना चाहिये। चूँकि जबर जिसका रूप जेर जैसा ही होता है और अक्षर के ऊपर लगाया जाता है, नागरी अक्षरो में सम्मिलित होता है, इसलिये इसे नागरी लिपि की मात्राओ में सम्मिलित करने की जरूरत नही। अलबत्त: किसी अक्षर से जबर की हरकत को ख़ारिज करने के लिए उसके नीचे हलन्त लगादेना चाहिये। जैसे (शम्'अ) के म और (बह्‌र) के "ह" में लगाया गया है।

इस तरह नागरी लिपि उर्दू की आवाजो को बडी हद तक व्यक्त करने में समर्थ हो जायगी।

नागरी लिपि में सशोधन और परिवर्द्धन का जो प्रस्ताव यहाँ पेश किया गया है, सम्भव है कि हिन्दी के कुछ क्षेत्रो में इसे स्वीकार करने योग्य न समझा जाय। लेकिन यह विश्वास है कि यह प्रस्ताव उन लोगो को भी सोचने का अवसर अवश्य देगा और इस प्रकार नागरी लिपि के दूसरे प्रश्नो पर भी, जिन्हे मैने यहाँ नही छेड़ा है, विचार-विनिमय और वाद-विवाद हो सकेगा।

अन्त मे उन सब मित्रो के प्रति आभार प्रकट करते हुए मुझे अत्यन्त हर्ष होता है जिनके सहयोग से दीवान-ए-ग़ालिब का प्रस्तुत संस्करण प्रकाशित हुआ है। सबसे पहिले मैं लाला योधराज का आभारी हूँ जिनकी उदारता और विशाल हृदयता से हिन्दुस्तानी बुक ट्रस्ट अस्तित्व मे आया। दीवान--ए-ग़ालिब इस ट्रस्ट का प्रथम ग्रन्थ है। मीर, इक़बाल और उर्दू के दूसरे महान कवियो के संकलन भविष्य मे प्रकाशित होगे। मेरे आदरणीय मित्र श्री शहाबुद्दीन देस्नवी ने अपनी अत्यन्त व्यस्तता के बावजूद हिन्दुस्तानी बुक ट्रस्ट के स्थापन और दीवान के मुद्रण मे जिस तरह प्रयत्न किया है और अपना बहुमूल्य समय दिया है उसकी प्रशंसा के लिये शब्द नाकाफी है। श्री वी. शंकर के कीमती मशवरो के साथ-साथ जो काम करनेवालो के मार्गदर्शन और उत्साहवर्धन का कारण हुए, डाक्टर मुल्कराज आनन्द और उनकी सहयोगिनी मिस सैयार के परामर्श से दीवान-ए-ग़ालिब का हर पृष्ठ सुसज्जित है और इसका यह सुन्दर और मनोहर रूप उन्ही के प्रयत्नो का नतीज: है। मै श्री मालिक राम का भी आभारी हूँ, जिन्होने अपने सम्पादित दीवान-ए-ग़ालिब का उपयोग करने की अनुमति देकर मेरे काम को बहुत आसान बना दिया। श्री मुग़नी अमरोहवी ने ग़ज़लो को देवनागरी मे लिपिबद्ध किया और हर पृष्ठ का संशोधन किया और श्री प्रेम स्वरूप शर्मा ने शब्दावली सम्पादित करने में मेरा हाथ बटाया। इन दोनो मित्रो के सहयोग के बिना इस कर्तव्य से भारमुक्त होना मेरे लिये असम्भव था।

अदबी प्रिटिग प्रेस के सभी कार्यकर्ता विशेष रूप से मेरे धन्यवाद के अधिकारी है। उन्होने दिन रात एक करके दीवान-ए-ग़ालिब इतनी स्वच्छता के साथ छापा है और अपने और अपने प्रेस के लिए दिलो के अन्दर जगह पैदा करली है।

ख़ुदा करे इस दीवान के प्रकाशन से हिन्दी वालो और उर्दू वालो के दिलो में प्रेम के नये पुष्प खिले और हमारा देश और हमारी भाषा उन की सुगंध से महक उठे।

सरदार जा'फ़री

बम्बई
जुलाई १९५८

लिखावट और उच्चारण का नक़्शः

श़ ژ	'ऐन ع
ज़ और श के बीच की आवाज़	'अ (पूरा) ' (आधा)

छोटी हे [ः] [ہ]

लिखावट		उच्चारण
नग़मः	अ	नग़मा
नग़मः -ए-	अऐ	नग़मऐ
नग़मः -ओ-	अओ	नग़मओ

'अत्फ़ [-ओ-] [و] عطف

(दो शब्दों का जोड़)

गुल-ओ-बुलबुल	ओ	गुलो-बुलबुल
लालः-ओ-गुल	अओ	लालओ-गुल
अदा-ओ-नाज़	आओ	अदाओ-नाज़

इज़ाफ़त [-ए-] [ِ] اضافت

(दो शब्दों का संबंध)

ग़म-ए-दिल	ऐ	ग़मे-दिल
नग़मः-ए-दिल	अऐ	नग़मऐ-दिल
हवा-ए-दिल	आऐ	हवाऐ-दिल

१
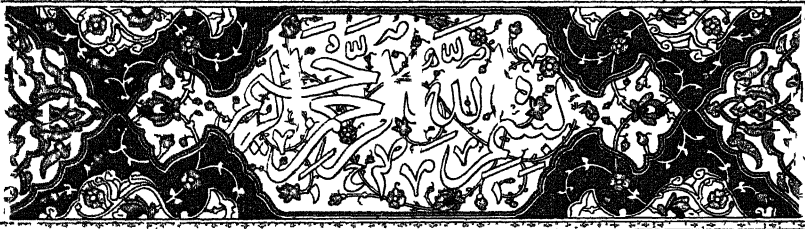
नक्श फरियादी है, किसकी शोखि-ए-तहरीर का
काग्जी है पैरहन, हर पैकर-ए-तस्वीर का

काव-ए-काव-ए-सख्त जानीहा-ए-तन्हाई न पूछ
सुबह करना शाम का, लाना है जू-ए-शीर का

जज्ब-ए-बे इख्तियार-ए-शौक देखा चाहिये
सीन-ए-शमशीर से बाहर है, दम शमशीर का
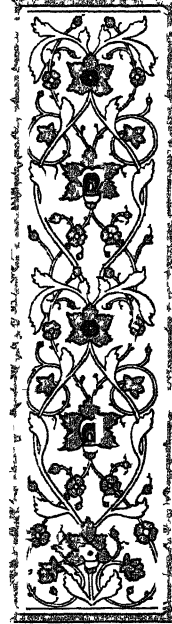
आगही, दाम-ए-शनीदन, जिस क़दर चाहे, बिछाये
मुद्द'आ 'अंक़ा है, अपने 'आलम-ए-तक़रीर का

बसकि हूँ, ग़ालिब, असीरी में भी आतश ज़ेर-ए-पा
मू-ए-आतश दीदः, है हल्क़ः मिरी ज़ंजीर का

२

जराहत तोह्फ़ः, अल्मास अर्मुग़ाँ, दाग़-ए-जिगर हदियः
मुबारकबाद असद, ग़मख़्वार-ए-जान-ए-दर्दमन्द आया

३

जुज़ क़ैस और कोई न आया, ब रू-ए-कार
सह्रा, मगर, ब तँगि-ए-चश्म-ए-हुसूद था

आशुफ़्तगी ने नक़्श-ए-सुवैदा किया दुरुस्त
ज़ाहिर हुआ, कि दाग़ का सरमायः दूद था

था ख़्वाब में, ख़याल को तुझसे मु'आमलः
जब आँख खुल गई, न ज़ियाँ था न सूद था

लेता हूँ मक्तब-ए-ग़म-ए-दिल में सबक़ हनोज़
लेकिन यही कि, रफ़्त गया, और बूद था

ढाँपा कफ़न ने दाग़-ए-'अ़यूब-ए-बरह्नगी
मैं, वर्नः हर लिबास में नँग-ए-वुजूद था

तेशे बिग़ैर मर न सका कोहकन, असद
सरगश्तः-ए-ख़ुमार-ए-रुसूम-ओ-क़ुयूद था

४

कहते हो, न देंगे हम, दिल अगर पड़ा पाया
दिल कहाँ, कि गुम कीजे, हमने मुद्द'आ पाया

'अिश्क़ से, तबी'अत ने, ज़ीस्त का मज़ा पाया
दर्द की दवा पाई, दर्द-ए-बेदवा पाया

दोस्तदार-ए-दुश्मन है, ए'तिमाद-ए-दिल मा'लूम
आह बेअसर देखी, नालः नारसा पाया

सादगि-ओ-पुरकारी, बेख़ुदि-ओ-हुशियारी
हुस्न को तग़ाफ़ुल में, जुरअत आज़मा पाया

ग़ुंचः फिर लगा खिलने, आज हमने अपना दिल
ख़ूँ किया हुआ देखा, गुम किया हुआ पाया

हाल-ए-दिल नहीं मा'लूम, लेकिन इस क़दर या'नी
हम ने बारहा ढूँढा, तुम ने बारहा पाया

शोर-ए-पन्द-ए-नासेह ने ज़ख़्म पर नमक छिड़का
आप से कोई पूछे, तुम ने क्या मज़ा पाया

५

दिल मिरा, सोज़-ए-निहाँ से, बेमहाबा जल गया
आतश-ए-ख़ामोश की मानिन्द गोया जल गया

दिल में, ज़ौक़-ए-वस्ल-ओ-याद-ए-यार तक, बाक़ी नहीं
आग इस घर में लगी ऐसी कि जो था जल गया

मैं 'अदम से भी परे हूँ, वर्नः ग़ाफ़िल, बारहा
मेरी आह-ए-आतशीं से, बाल-ए-'अंका जल गया

अर्ज़ कीजे, जौहर-ए-अन्देशः की गर्मी कहाँ
कुछ ख़याल आया था वहशत का, कि सहरा जल गया

दिल नहीं, तुझको दिखाता वर्नः, दाग़ों की बहार
इस चराग़ाँ का, करूँ क्या, कारफ़रमा जल गया

मैं हूँ और अफ़सुर्दगी की आरज़ू, ग़ालिब, कि दिल
देख कर तर्ज़-ए-तपाक-ए-अहल-ए-दुनिया जल गया

६

शौक़ हर रंग, रक़ीब-ए-सर-ओ-सामाँ निकला
क़ैस तस्वीर के पर्दे में भी 'अुरियाँ निकला

ज़ख़्म ने दाद न दी तंगि-ए-दिल की यारब
तीर भी सीनः-ए-बिस्मिल से परअफ़शाँ निकला

बू-ए-गुल, नालः-ए-दिल, दूद-ए-चराग़-ए-महफ़िल
जो तिरी बज़्म से निकला, सो परीशाँ निकला

दिल-ए-हसरतज़दः था मायद.-ए-लज़्ज़त-ए-दर्द
काम यारों का, बक़द्र-ए-लब-ओ-दन्दाँ निकला

थी नौआमोज़-ए-फ़ना, हिम्मत-ए-दुश्वार पसन्द
सख़्त मुश्किल है, कि यह काम भी आसाँ निकला

दिल में फिर गिरिये ने इक शोर उठाया, ग़ालिब
आह जो क़तरः न निकला था, सो तूफ़ाँ निकला

७

धमकी में मर गया, जो न बाब-ए-नबर्द था
'अिश्क़-ए-नबर्द पेशः, तलबगार-ए-मर्द था

हवा-ए-सैर-ए-गुल, आईनः-ए-बेमेहरि-ए-क़ातिल
कि अन्दाज़-ए-बख़ूँ ग़लतीदन-ए-बिस्मिल पसन्द आया

९

दह्र में, नक़्श-ए-वफ़ा, वज्ह-ए-तसल्ली न हुआ
है यह वह लफ़्ज़, कि शर्मिन्दः-ए-म'अनी न हुआ

सब्ज़ः-ए-ख़त से तिरा, काकुल-ए-सरकश न दबा
यह ज़मर्रुद भी हरीफ़-ए-दम-ए-अफ़'ई न हुआ

मैं ने चाहा था कि अन्दोह-ए-वफ़ा से छूटूँ
वह सितमगर मिरे मरने प भी राज़ी न हुआ

दिल गुज़रगाह-ए-ख़याल-ए-मै-ओ-साग़र ही सही
गर नफ़स जादः-ए-सरमंज़िल-ए-तक़वा न हुआ

हूँ तिरे व'अदः न करने में भी राज़ी, कि कभी
गोश मिन्नत-कश-ए-गुलबाँग-ए-तसल्ली न हुआ

किससे महरूमि-ए-क़िस्मत की शिकायत कीजे
हमने चाहा था कि मर जायें, सो वह भी न हुआ

मर गया सदमः-ए-यक जुंबिश-ए-लब से ग़ालिब
नातवानी से हरीफ़-ए-दम-ए-'ईसा न हुआ

सताइशगर है ज़ाहिद इस क़दर, जिस बाग़-ए-रिज़्वाँ का
वह इक गुलदस्तः है हम बेख़ुदों के ताक़-ए-निसियाँ का

बयाँ क्या कीजिये बेदाद-ए-काविशहा-ए-मिश़गाँ का
कि हरइक क़तरः-ए-ख़ूँ दानः है तस्बीह-ए-मरजाँ का

न आई सतवत-ए-क़ातिल भी माने'अ, मेरे नालों को
लिया दाँतों में जो तिन्का, हुआ रेशः नयसताँ का

दिखाऊँगा तमाशा, दी अगर फ़ुर्सत ज़माने ने
मिरा हर दाग़-ए-दिल, इक तुख़्म है सर्व-ए-चराग़ाँ का

किया आईनः-खाने का वह नक़्शः, तेरे जल्वे ने
करे, जो परतव-ए-ख़ुर्शीद, 'आलम शबनमिस्ताँ का

मिरी ता'मीर में मुज़्मर, है इक सूरत ख़राबी की
हयूला बर्क़-ए-खरमन का, है ख़ून-ए-गर्म देहक़ाँ का

उगा है घर में हर सू सब्ज़ः, वीरानी तमाशा कर
मदार, अब खोदने पर घास के, है मेरे दरबाँ का

खमोशी में निहाँ, ख़ूँगश्तः लाखों आरज़ूयें हैं
चराग़-ए-मुर्दः हूँ, मैं बेज़बाँ, गोर-ए-ग़रीबाँ का

हनोज़, इक परतव-ए-नक़्श-ए-ख़याल-ए-यार बाक़ी है
दिल-ए-अफ्सुर्दः, गोया, हुजरः है यूसुफ़ के ज़िन्दाँ का

बग़ल में ग़ैर की, आज आप सोते हैं कहीं, वर्नः
सबब क्या, ख़्वाब में आकर तबस्सुमहा-ए-पिन्हाँ का

नहीं मा'लूम, किस किसका लहू पानी हुआ होगा
क़यामत है, सरश्क आलूदः होना तेरी मिश़गाँ का

नज़र में है हमारी जादः-ए-राह-ए-फ़ना ग़ालिब
कि यह शीराज़ः है 'आलम के अज्ज़ा-ए-परीशाँ का

११

न होगा यक बयाबाँ मान्दगी से ज़ौक़ कम मेरा
हबाब-ए-मौजः-ए-रफ़्तार है नक़्श-ए-क़दम मेरा

महब्बत थी चमन से, लेकिन अब यह बेदिमाग़ी है
कि मौज-ए-बू-ए-गुल से नाक में आता है दम मेरा

१२

सरापा रेहन-ए-'अिश्क़-ओ-नागुज़ीर-ए-उल्फ़त-ए-हस्ती
'अिबादत बर्क़ की करता हूँ और अफ़सोस हासिल का

बक़द्र-ए-ज़र्फ़ है, साक़ी, ख़ुमार-ए-तश्नःकामी भी
जो तू दरिया-ए-मै है, तो मैं खमियाज़ः हूँ साहिल का

१३

महरम नहीं है तू ही नवाहा-ए-राज़ का
याँ वर्नः जो हिजाब है, पर्दः है साज़ का

रँग-ए-शिकस्तः, सुबह-ए-बहार-ए-नज़ारः है
यह वक़्त है शिगुफ़्तन-ए-गुलहा-ए-नाज़ का

तू और सू-ए-ग़ैर नज़रहा-ए-तेज़ तेज़
मैं और दुख तिरी मिशःहा-ए-दराज़ का

सर्फ़ः है ज़ब्त-ए-आह में मेरा, वगर्नः मैं
तो'मः हूँ, एक ही नफ़स-ए-जाँ गुदाज़ का

हैं, बसकि जोश-ए-बादः से, शीशे उछल रहे
हर गोशः-ए-बिसात, है सर शीशः बाज़ का

काविश का दिल करे है तक़ाज़ा, कि है हनोज़
नाख़ुन प क़र्ज़, इस गिरह-ए-नीमबाज़ का

ताराज-ए-काविश-ए-ग़म-ए-हिजराँ हुआ, असद
सीनः, कि था दफ़ीनः गुहरहा-ए-राज़ का

बज़्म-ए-शाहनशाह में अश'आर का दफ़्तर खुला
रखियो यारब, यह दर-ए-गंजीनः-ए-गौहर खुला

शब हुई, फिर अंजुमन-ए-रख़्शिन्दः का मंज़र खुला
इस तकल्लुफ़ से, कि गोया बुतकदे का दर खुला

गरचेः हूँ दीवानः, पर क्यों दोस्त का खाऊँ फ़रेब
आस्तीं में दश्नः पिन्हाँ, हाथ में नश्तर खुला

गो न समझूँ उसकी बातें, गो न पाऊँ उसका भेद
पर यह क्या कम है, कि मुझसे वह परी पैकर खुला

है, खयाल-ए-हुस्न में, हुस्न-ए-'अमल का सा ख़याल
ख़ुल्द का इक दर है, मेरी गोर के अन्दर, खुला

मुँह न खुलने पर, है वह 'आलम, कि देखा ही नहीं
ज़ुल्फ़ से बढ़कर, निक़ाब उस शोख़ के मुँह पर खुला

दर प रहने को कहा और कहके कैसा फिर गया
जितने 'अर्से में मिरा लिपटा हुआ बिस्तर खुला

क्यों अँधेरी है शब-ए-ग़म, है बलाओं का नुज़ूल
आज उधर ही को रहेगा दीदः-ए-अख़्तर खुला

क्या रहूँ ग़ुर्बत में ख़ुश, जब हो हवादिस का यह हाल
नामः लाता है वतन से नामःबर, अक्सर खुला

उसकी उम्मत में हूँ मैं, मेरे रहें क्यों काम बन्द
वासते जिस शह के, ग़ालिब, गुंबद-ए-बेदर खुला

१५

शब, कि बर्क़-ए-सोज़-ए-दिल से, ज़हरः-ए-अब्र आब था
शो'अलः-ए-जव्वालः हर इक हल्क़ः-ए-गिरदाब था

वाँ करम को, 'अुज़्र-ए-बारिश, था 'अिनाँगीर-ए-ख़िराम
गिरिये से याँ, पंबः-ए-बालिश कफ़-ए-सैलाब था

वाँ, ख़ुदआराई को, था मोती पिरोने का ख़याल
याँ, हुजूम-ए-अश्क में, तार-ए-निगह नायाब था

जल्वः-ए-गुल ने किया था; वाँ, चराग़ाँ आबजू
याँ; रवाँ मिशगान-ए-चश्म-ए-तर से ख़ून-ए-नाब था

याँ, सर-ए-पुरशोर बेख़्वाबी से था दीवार जू
वाँ, वह फ़र्क़-ए-नाज़ महव-ए-बालिश-ए-कमख़्वाब था

याँ, नफ़स करता था रौशन शम'अ-ए-बज़्म-ए-बेख़ुदी
जलवः-ए-गुल, वाँ, बिसात-ए-सोहबत-ए-अहबाब था

फ़र्श से ता 'अर्श, वाँ तूफ़ाँ था मौज-ए-रंग का
याँ ज़मीं से आस्माँ तक सोख्तन का बाब था

नागहाँ, इस रंग से ख़ूँनाबः टपकाने लगा,
दिल, कि ज़ौक़-ए-काविश-ए-नाख़ुन से लज़्ज़तयाब था

१६

नालः-ए-दिल में शब, अन्दाज़-ए-असर नायाब था
था सिपन्द-ए-बज़्म-ए-वस्ल-ए-ग़ैर, गो बेताब था

मक़दम-ए-सैलाब से, दिल क्या निशात आहंग है,
ख़ानः-ए-'आशिक़, मगर, साज़-ए-सदा-ए-आब था

नाज़िश-ए-अय्याम-ए-ख़ाकिस्तर नशीनी, क्या कहूँ,
पहलु-ए-अन्देशः, वक़्फ़-ए-बिस्तर-ए-संजाब था

कुछ न की, अपने जुनून-ए-नारसा ने, वर्नः याँ
ज़र्रः ज़र्रः, रूकश-ए-ख़ुर्शीद-ए-'आलम ताब था

आज क्यों परवा नहीं, अपने असीरों की तुझे
कल्ह तलक, तेरा भी दिल मेह्र-ओ-वफ़ा का बाब था

याद कर वह दिन, कि हर इक हल्क़ः तेरे दाम का
इन्तिज़ार-ए-सैद में, इक दीदः-ए-बेख़्वाब था

मैं ने रोका रात ग़ालिब को, वगर्नः देखते
उसके सैल-ए-गिरियः में, गर्दूं कफ़-ए-सैलाब था

१७

एक एक क़तरे का मुझे देना पड़ा हिसाब
ख़ून-ए-जिगर, वदी'अत-ए-मिशगान-ए-यार था

अब मैं हूँ और मातम-ए-यक शहर-ए-आरज़ू
तोड़ा जो तू ने आईनः, तिमसाल दार था

गलियों में मेरी न'अश को खेंचे फिरो, कि मैं
जाँ दादः-ए-हवा-ए-सर-ए-रहगुज़ार था

मौज-ए-सराब-ए-दश्त-ए-वफ़ा का न पूछ हाल
हर ज़र्रः मिस्ल-ए-जौहर-ए-तेग़ आबदार था

कम जानते थे हम भी ग़म-ए-'अिश्क़ को, पर अब
देखा, तो कम हुये प, ग़म-ए-रोज़गार था

१८

बसकि दुश्वार है, हर काम का आसाँ होना
आदमी को भी मुयस्सर नहीं, इन्साँ होना

गिरियः चाहे है ख़राबी मिरे काशाने की
दर-ओ-दीवार से टपके है, बयाबाँ होना

वाय दीवानगि-ए-शौक़, कि हर दम मुझको
आप जाना उधर, और आप ही हैराँ होना

जल्वः अज़बसकि तक़ाज़ा-ए-निगह करता है
जौहर-ए-आईनः भी, चाहे है मिश़गाँ होना

'अिश्रत-ए-क़त्लगह-ए-अहल-ए-तमन्ना मत पूछ
'ओद-ए-नज़्ज़ारः, है शमशीर का 'अुरियाँ होना

ले गये ख़ाक में हम, दाग़-ए-तमन्ना-ए-निशात
तू हो, और आप बसद रंग गुलिस्ताँ होना

'अिश्रत-ए-पारः-ए-दिल, ज़ख़्म-ए-तमन्ना खाना
लज़्ज़त-ए-रीश-ए-जिगर, ग़र्क़-ए-नमकदाँ होना

की मिरे क़त्ल के ब'अद, उसने जफ़ा से तौबः
हाय, उस ज़ूद पशेमाँ का पशेमाँ होना

हैफ़, उस चार गिरह कपड़े की क़िस्मत, ग़ालिब
जिसकी क़िस्मत में हो, 'आशिक़ का गरीबाँ होना

१९

शब, ख़ुमार-ए-शौक़-ए-साक़ी, रस्तख़ेज़ अन्दाज़ः था
ता मुहीत-ए-बादः सूरत ख़ानः-ए-खमियाज़ः था

यक क़दम वहशत से, दर्स-ए-दफ्तर-ए-इमकाँ खुला
जादः, अज्ज़ा-ए-दो'आलम दश्त का, शीराज़ः था

माने'अ-ए-वहशत ख़िरामीहा-ए-लैला, कौन है
ख़ानः-ए-मजनून-ए-सहरा गर्द, बे दरवाज़ः था

पूछ मत रुस्वाइ-ए-अन्दाज़-ए-इस्तिग़ना-ए-हुस्न
दस्त मरहून-ए-हिना, रुख़सार रेहन-ए-ग़ाज़ः था

नालः-ए-दिल ने दिये औराक़-ए-लख़्त-ए-दिल, बबाद
यादगार-ए-नालः, इक दीवान-ए-बे शीराज़ः था

२०

दोस्त ग़मख़्वारी में मेरी, स'अि फ़रमायेंगे क्या
ज़ख़्म के भरने तलक, नाख़ुन न बढ़ जायेंगे क्या

बेनियाज़ी हद से गुज़री, बन्दः परवर कब तलक
हम कहेंगे हाल-ए-दिल, और आप फरमायेंगे क्या

हज़रत-ए-नासेह गर आयें, दीद:-ओ-दिल फ़र्श-ए-राह
कोई मुझको यह तो समझादो, कि समझायेंगे क्या

आज वाँ तेग़-ओ-कफ़न बाँधे हुये जाता हूँ मैं
'अुज़्र मेरे क़त्ल करने में वह अब लायेंगे क्या

गर किया नासेह ने हम को क़ैद, अच्छा, यों सही
यह जुनून-ए-'अिश्क़ के अन्दाज़ छुट जायेंगे क्या

खान:ज़ाद-ए-ज़ुल्फ हैं, ज़ंजीर से भागेंगे क्यों
हैं गिरफ़्तार-ए-वफ़ा, ज़िन्दाँ से घबरायेंगे क्या

है अब इस म'अमूरे में क़ेहत-ए-ग़म-ए-उल्फ़त, असद
हम ने यह माना, कि दिल्ली में रहें, खायेंगे क्या

२१

यह न थी हमारी क़िस्मत, कि विसाल-ए-यार होता
अगर और जीते रहते, यही इन्तिज़ार होता

तिरे व'अदे पर जिये हम, तो यह जान, झूट जाना
कि ख़ुशी से मर न जाते, अगर 'एतिबार होता

तिरी नाज़ुकी से जाना, कि बंधा था 'अ़ेह्‌द बोदा
कभी तू न तोड़ सकता, अगर उस्तुवार होता

कोई मेरे दिल से पूछे, तिरे तीर-ए-नीमकश को
यह ख़लिश कहाँ से होती, जो जिगर के पार होता

यह कहाँ की दोस्ती है, कि बने हैं दोस्त, नासेह
कोई चारः साज़ होता, कोई ग़मगुसार होता

रग-ए-संग से टपकता, वह लहू, कि फिर न थमता
जिसे ग़म समझ रहे हो, यह अगर शरार होता

ग़म अगरचेः जाँगुसिल है, प कहाँ बचें, कि दिल है
ग़म-ए-'अ़िश्क़ गर न होता, ग़म-ए-रोज़गार होता

कहूँ किससे मैं कि क्या है, शब-ए-ग़म बुरी बला है
मुझे क्या बुरा था मरना, अगर एक बार होता

हुये मरके हम जो रुस्वा, हुये क्यों न ग़र्क़-ए-दरिया
न कभी जनाज़ः उठता, न कहीं मज़ार होता

उसे कौन देख सकता, कि यगानः है वह यकता
जो दुई की बू भी होती, तो कहीं दुचार होता

यह मसाइल-ए-तसव्वुफ़, यह तिरा बयान, ग़ालिब
तुझे हम वली समझते, जो न बादःख़्वार होता

हवस को है निशात-ए-कार क्या क्या
न हो मरना तो जीने का मज़ा क्या

तजाहुल पेशगी से मुद्द'आ क्या
कहाँ तक, अय सरापा नाज़, क्या, क्या

नवाज़िशहा -ए- बेजा , देखता हूँ
शिकायतहा -ए- रंगीं का गिला क्या

निगाह -ए- बेमहाबा चाहता हूँ
तग़ाफ़ुलहा -ए- तमकीं आज़मा क्या

फ़रोग़-ए-शो'अलः-ए-ख़स यक नफ़स है
हवस को पास-ए-नामूस-ए-वफ़ा क्या

नफ़स, मौज-ए-मुहीत-ए-बेख़ुदी है
तग़ाफ़ुलहा-ए-साक़ी का गिला क्या

दिमाग़ -ए- 'अित्र -ए- पैराहन नहीं है
ग़म -ए- आवारगीहा -ए- सबा क्या

दिल-ए-हर क़तरः है साज़-ए-अनल बह्र
हम उसके हैं; हमारा पूछना क्या

महाबा क्या है, मैं ज़ामिन, इधर देख
शहीदान-ए-निगह का ख़ूँ-बहा क्या

सुन, अय ग़ारतगर-ए-जिन्स-ए-वफ़ा, सुन
शिकस्त-ए-शीशः-ए-दिल की सदा क्या

किया किसने जिगरदारी का दा'वा
शिकेब-ए-ख़ातिर-ए-'आशिक़, भला क्या

यह क़ातिल वा'दः-ए-सब्र आज़मा क्यों
यह काफ़िर फ़ितनः-ए-ताक़त रुबा क्या

बला-ए-जाँ है, ग़ालिब, उसकी हर बात
'अिबारत क्या, इशारत क्या, अदा क्या

२३

दर ख़ुर-ए-क़ेह्र-ओ-ग़ज़ब, जब कोई हमसा न हुआ
फिर ग़लत क्या है, कि हमसा कोई पैदा न हुआ

बन्दगी में भी, वह आज़ादः-ओ-ख़ुदबीं हैं, कि हम
उलटे फिर आये, दर-ए-का'बः अगर वा न हुआ

सबको मक़बूल, है दा'वा तिरी यकताई का
रुबरू कोई बुत-ए-आईनः सीमा न हुआ

कम नहीं, नाज़िश-ए-हमनामि-ए-चश्म-ए-ख़ूबाँ
तेरा बीमार, बुरा क्या है, गर अच्छा न हुआ

सीने का दाग़ है, वह नालः कि लब तक न गया
ख़ाक का रिज़्क़ है, वह क़तरः कि दरिया न हुआ

काम का मेरे है, वह दुख कि किसी को न मिला
काम में मेरे है, वह फ़ितनः कि बरपा न हुआ

हर बुन-ए-मू से, दम-ए-ज़िक्र, न टपके ख़ूँनाब
हमज़: का क़िस्सः हुआ, 'अिश्क़ का चरचा न हुआ

क़तरे में दजलः दिखाई न दे, और जुज़्व में कुल
खेल लड़कों का हुआ, दीदः-ए-बीना न हुआ

थी ख़बर गर्म, कि ग़ालिब के उड़ेंगे पुर्ज़े
देखने हम भी गये थे, प तमाशा न हुआ

असद, हम वह जुनूँ जौलाँ गदा-ए-बेसर-ओ-पा हैं
कि है सर पन्जः-ए-मिश़गान-ए-आहू, पुश्त-ए-ख़ार अपना

प-ए-नज़र-ए-करम तोहफ़:, है शर्म-ए-नारसाई का
बख़ूँ ग़लतीद:-ए-सद रंग दा'वा पारसाई का

न हो हुस्न-ए-तमाशा दोस्त, रुस्वा बेवफ़ाई का
बमुहर-ए-सद नज़र साबित है दा'वा पारसाई का

ज़कात-ए-हुस्न दे, अय जल्व:-ए-बीनश, कि मेहर-आसा
चराग़-ए-ख़ान:-ए-दरवेश हो, कास: गदाई का

न मारा, जानकर बेजुर्म, क़ातिल तेरी गर्दन पर
रहा मानिन्द-ए-ख़ून-ए-बेगुनह, हक़ आशनाई का

तमन्ना-ए-ज़बाँ महव-ए-सिपास-ए-बेज़बानी है
मिटा जिससे तक़ाज़ा, शिक्व:-ए-बेदस्त-ओ-पाई का

वही इक बात है, जो याँ नफ़स, वाँ नकहत-ए-गुल है
चमन का जल्व: बा'अिस है, मिरी रंगीं नवाई का

दहान-ए-हर बुत-ए-पैग़ार:जू, ज़ंजीर-ए-रुस्वाई
'अदम तक बेवफ़ा, चरचा है तेरी बेवफ़ाई का

न दे नामे को इतना तूल, ग़ालिब; मुख़्तसर लिख दे
कि हसरत संज हूँ, 'अर्ज़-ए-सितमहा-ए-जुदाई का

गर न अन्दोह-ए-शब-ए-फ़ुर्क़त बयाँ हो जायगा
बेतकल्लुफ़ दाग़-ए-मह, मोहूर-ए-दहाँ हो जायगा

ज़हरः गर ऐसा ही, शाम-ए-हिज्र में होता है आब
परतव-ए-महताब, सैल-ए-ख़ान्माँ हो जायगा

ले तो लूँ, सोते में उसके पाँव का बोसः, मगर
ऐसी बातों से, वह काफ़िर बदगुमाँ हो जायगा

दिल को हम सर्फ़-ए-वफ़ा समझे थे, क्या मा'लूम था
या'नी, यह पहले ही नज़्र-ए-इम्तिहाँ हो जायगा

सब के दिल में है जगह तेरी, जो तू राज़ी हुआ
मुझ प गोया इक ज़मानः मेहरबाँ हो जायगा

गर निगाह-ए-गर्म फरमाती रही, ता'लीम-ए-ज़ब्त
शो'लः ख़स में, जैसे ख़ूँ रग में, निहाँ हो जायगा

बाग़ में मुझको न लेजा, वर्नः मेरे हाल पर
हर गुल-ए-तर एक चश्म-ए-ख़ूँफ़िशाँ हो जायगा

वाय, गर मेरा तिरा इन्साफ़, महशर में न हो
अब तलक तो यह तवक़्क़ो'अ है, कि वाँ हो जायगा

फ़ायदः क्या, सोच, आख़िर तू भी दाना है, असद
दोस्ती नादाँ की है, जी का ज़ियाँ हो जायगा

२७

दर्द मिन्नत कश-ए-दवा न हुआ
मैं न अच्छा हुआ, बुरा न हुआ

जम'अ करते हो क्यों रक़ीबों को
इक तमाशा हुआ, गिला न हुआ

हम कहाँ क़िस्मत आज़माने जायें
तू ही जब खंजर आज़मा न हुआ

कितने शीरीं हैं तेरे लब, कि रक़ीब
गालियाँ खा के बेमज़ा न हुआ

है ख़बर गर्म उनके आने की
आज ही, घर में बोरिया न हुआ

क्या वह नमरूद की ख़ुदाई थी
बन्दगी में मिरा भला न हुआ

जान दी, दी हुई उसी की थी
हक़ तो यह है, कि हक़ अदा न हुआ

ज़ख़्म गर दब गया, लहू न थमा
काम गर रुक गया; रवा न हुआ

रहज़नी है, कि दिल सितानी है
ले के दिल, दिलसिताँ रवाना हुआ

कुछ तो पढ़िये, कि लोग कहते हैं
आज ग़ालिब ग़ज़लसरा न हुआ

२८

गिला है शौक़ को, दिल में भी तंगि-ए-जा का
गुहर में महव हुआ इज़्तिराब दरिया का

यह जानता हूँ, कि तू और पासुख़-ए-मक्तूब
मगर, सितम ज़दः हूँ, ज़ौक़-ए-ख़ामःफरसा का

हिना-ए-पा-ए-ख़िज़ाँ है, बहार अगर है यही
दवाम कुल्फ़त-ए-ख़ातिर है 'ऐश दुनिया का

ग़म-ए-फ़िराक़ में, तक्लीफ-ए-सैर-ए-बाग़ न दो
मुझे दिमाग़ नहीं ख़न्दःहा-ए-बेजा का

हनोज़ महरमि-ए-हुस्न को तरसता हूँ
करे है हर बुन-ए-मू काम चश्म-ए-बीना का

दिल उसको, पहले ही नाज़-ओ-अदा से, दे बैठे
हमें दिमाग़ कहाँ, हुस्न के तक़ाज़ा का

न कह, कि गिरियः बमिक़्दार-ए-हसरत-ए-दिल है
मिरी निगाह में है जम‘-ओ-ख़र्च दरिया का

फ़लक को देख के, करता हूँ उसको याद, असद
जफ़ा में उसकी, है अन्दाज़ कारफ़रमा का

२९

क़तरः-ए-मै, बसकि हैरत से नफ़स परवर हुआ
ख़त्त-ए-जाम-ए-मै सरासर, रिश्तः-ए-गौहर हुआ

ए‘तिबार-ए-‘अिश्क़ की ख़ानः ख़राबी देखना
ग़ैर ने की आह, लेकिन वह ख़फ़ा मुझपर हुआ

३०

जब, बतक़रीब-ए-सफ़र, यार ने महमिल बाँधा
तपिश-ए-शौक़ ने हर ज़र्रे प इक दिल बाँधा

अहल-ए-बीनश ने बहैरत कदः-ए-शोख़ि-ए-नाज़
जौहर-ए-आइनः को तूति-ए-बिस्मिल बाँधा

यास-ओ-उम्मीद ने, यक 'अरबदः मैदाँ माँगा
'अिज्ज़-ए-हिम्मत ने तिलिस्म-ए-दिल-ए-साइल बाँधा

न बंधे तशनिगि-ए-ज़ौक़ के मज़मूँ, ग़ालिब
गरचेः दिल खोल के दरिया को भी साहिल बाँधा

३१

मैं, और बज़्म-ए-मै से, यों तश्नःकाम आऊँ
गर मैं ने की थी तौबः, साक़ी को क्या हुआ था

है एक तीर, जिस में दोनों छिदे पड़े हैं
वह दिन गये, कि अपना दिल से जिगर जुदा था

दरमान्दगी में ग़ालिब, कुछ बन पड़े, तो जानूँ
जब रिश्तः बेगिरह था, नाख़ुन गिरह कुशा था

३२

घर हमारा, जो न रोते भी, तो वीराँ होता
बह्र, गर बह्र न होता, तो बयाबाँ होता

तंगि-ए-दिल का गिला क्या, यह वह काफ़िर दिल है
कि अगर तंग न होता, तो परीशाँ होता

बा'द-ए-यक उम्र-ए-वर'अ, बार तो देता, बारे
काश, रिज़्वाँ ही दर-ए-यार का दरबाँ होता

३३

न था कुछ, तो ख़ुदा था, कुछ न होता, तो ख़ुदा होता
डुबोया मुझको होने ने, न होता मैं तो क्या होता

हुआ जब ग़म से यों बेहिस, तो ग़म क्या सर के कटने का
न होता गर जुदा तन से, तो ज़ानू पर धरा होता

हुई मुद्दत, कि ग़ालिब मर गया, पर याद आता है
वह हर इक बात पर कहना, कि यों होता, तो क्या होता

३४

यक ज़र्रः-ए-ज़मीं नहीं बेकार, बाग़ का
याँ जादः भी, फ़तीलः है लाले के दाग़ का

बे मै किसे है ताक़त-ए-आशोब-ए-आगही
खेंचा है 'अिज्ज़-ए-हौसलः ने ख़त अयाग़ का

बुलबुल के कार-ओ-बार प हैं, ख़न्दःहा-ए-गुल
कहते हैं जिसको 'अिश्क़, ख़लल है दिमाग़ का

ताज़: नहीं है नश्शः-ए-फ़िक्र-ए-सुख़न मुझे
तिरयाकि-ए-क़दीम हूँ दूद-ए-चराग़ का

सौ बार बन्द-ए-'अिश्क़ से आज़ाद हम हुये
पर क्या करें, कि दिल ही 'अदू है फ़राग़ का

बेख़ून-ए-दिल है चश्म में मौज-ए-निगह ग़ुबार
यह मैकदः ख़राब है, मै के सुराग़ का

बाग़-ए-शिगुफ़्तः तेरा, बिसात-ए-निशात-ए-दिल
अब्र-ए-बहार, ख़ुमकदः किसके दिमाग़ का

३५

वह मिरी चीन-ए-जबीं से, ग़म-ए-पिन्हाँ समझा
राज़-ए-मक्तूब ब बेरब्ति-ए-'अुन्वाँ समझा

यक अलिफ़ बेश नहीं, सैक़ल-ए-आईनः हनोज़
चाक करता हूँ मैं, जब से कि गरीबाँ समझा

शर्ह-ए-अस्बाब-ए-गिरफ़्तारि-ए-ख़ातिर, मत पूछ
इस क़दर तंग हुआ दिल, कि मैं ज़िन्दाँ समझा

बदगुमानी ने न चाहा उसे सरगर्म-ए-ख़िराम
रुख़ प हर क़तरः 'अरक़, दीदः-ए-हैराँ समझा

'अिज्ज़ से अपने यह जाना, कि वह बदख़ू होगा
नब्ज़-ए-ख़स से तपिश-ए-शो'लः-ए-सोज़ाँ समझा

सफ़र-ए-'अिश्क़ में की ज़ो'फ़ ने राहत तलबी
हर क़दम साये को मैं अपने शबिस्ताँ समझा

था गुरेज़ाँ मिश़:-ए-यार से दिल, ता दम-ए-मर्ग
दफ़'-ए-पैकान-ए-क़ज़ा, इस क़दर आसाँ समझा

दिल दिया जान के क्यों उसको वफ़ादार, असद
ग़लती की, कि जो काफ़िर को मुसलमाँ समझा

३६

फिर मुझे दीद:-ए-तर याद आया
दिल, जिगर तश्न:-ए-फ़रियाद आया

दम लिया था न क़यामत ने हनोज़
फिर तिरा वक़्त-ए-सफ़र याद आया

सादगीहा -ए- तमन्ना , या'नी
फिर वह नैरंग-ए-नज़र याद आया

'अुज़्र-ए-वामान्दगी, अय हसरत-ए-दिल
नालः करता था, जिगर याद आया

ज़िन्दगी यों भी गुज़र ही जाती
क्यों तिरा राहगुज़र याद आया

क्या ही रिज़्वाँ से लड़ाई होगी
घर तिरा ख़ुल्द में गर याद आया

आह वह जुरअत-ए-फ़रियाद कहाँ
दिल से तंग आ के जिगर याद आया

फिर तिरे कूचे को जाता है ख़याल
दिल-ए-गुमगश्तः, मगर याद आया

कोई वीरानी सी वीरानी है
दश्त को देख के घर याद आया

मैं ने मजनूँ प लड़कपन में, असद
संग उठाया था, कि सर याद आया

३७

हुई ताख़ीर, तो कुछ बा'इस-ए-ताख़ीर भी था
आप आते थे, मगर कोई 'इनाँगीर भी था

तुम से बेजा, है मुझे अपनी तबाही का गिला
उसमें कुछ शाइबः-ए-ख़ूबि-ए-तक़दीर भी था

तू मुझे भूल गया हो, तो पता बतलादूँ
कभी फ़ितराक में तेरे, कोई नखचीर भी था

क़ैद में, है तिरे वहशी को, वही ज़ुल्फ़ की याद
हाँ कुछ इक रंज-ए-गिराँबारि-ए-ज़ंजीर भी था

बिजली इक कौन्द गई आँखों के आगे, तो क्या
बात करते, कि मैं लब तश्नः-ए-तक़रीर भी था

यूसुफ उसको कहूँ, और कुछ न कहे, ख़ैर हुई
गर बिगड़ बैठे, तो मैं लाइक़-ए-ता'ज़ीर भी था

देख कर ग़ैर को, हो क्यों न कलेजा ठण्डा
नालः करता था, वले तालिब-ए-तासीर भी था

पेशे में 'ऐब नहीं, रखिये न फ़रहाद को नाम
हम ही आशुफ़्तःसरों में, वह जवाँ मीर भी था

हम थे मरने को ख़ड़े, पास न आया, न सही
आख़िर उस शोख़ के तरकश में कोई तीर भी था

पकड़े जाते हैं फ़रिश्तों के लिखे पर, नाहक़
आदमी कोई हमारा, दम-ए-तहरीर भी था

रीख़्ते के तुम्हीं उस्ताद नहीं हो, ग़ालिब
कहते हैं, अगले ज़माने में कोई मीर भी था

३८

लब-ए-ख़ुश्क दर तशनिगी, मुर्दगाँ का
ज़ियारत कदः हूँ, दिल आज़ुर्दगाँ का

हमः नाउमीदी, हमः बदगुमानी
मैं दिल हूँ, फ़रेब-ए-वफ़ा ख़ुर्दगाँ का

३९

तू दोस्त किसी का भी, सितमगर, न हुआ था
औरों प है वह ज़ुल्म, कि मुझ पर न हुआ था

छोड़ा मह-ए-नख़्शब की तरह, दस्त-ए-क़ज़ा ने
ख़ुर्शीद हनोज़ उसके बराबर न हुआ था

तौफ़ीक़ ब अन्दाज़ः-ए-हिम्मत है अज़ल से
आँखों में है वह क़तरः, कि गौहर न हुआ था

जब तक कि न देखा था, क़द-ए-यार का 'आलम
मैं मो'तक़िद-ए-फ़ितनः-ए-महशर न हुआ था

मैं सादः दिल, आज़ुर्दगि-ए-यार से ख़ुश हूँ
या'नी सबक़-ए-शौक़, मुकर्रर न हुआ था

दरिया-ए-म'आसी, तुनुक आबी से, हुआ ख़ुश्क
मेरा सर-ए-दामन भी, अभी तर न हुआ था

जारी थी असद, दाग़-ए-जिगर से मिरे तहसील
आतशकदः, जागीर-ए-समन्दर न हुआ था

४०

शब, कि वह मजलिस फ़रोज़-ए-ख़ल्वत-ए-नामूस था
रिश्तः-ए-हर शम'अ, ख़ार-ए-किसवत-ए-फ़ानूस था

मशहद-ए-'आशिक़ से कोसों तक जो उगती है हिना
किसक़दर, यारब, हलाक-ए-हसरत-ए-पाबोस था

हासिल-ए-उल्फ़त न देखा, जुज़ शिकस्त-ए-आरज़ू
दिल बदिल पैवस्तः, गोया इक लब-ए-अफ़सोस था

क्या कहूँ बीमारि-ए-ग़म की फ़राग़त का बयाँ
जो कि खाया ख़ून-ए-दिल, बेमिन्नत-ए-कीमूस था

४१

आईनः देख, अपना सा मुँह ले के रह गये
साहब को, दिल न देने प कितना ग़ुरूर था

क़ासिद को अपने हाथ से गर्दन न मारिये
उसकी ख़ता नहीं है, यह मेरा क़ुसूर था

४२

अर्ज़-ए-नियाज़-ए-'अिश्क़ के क़ाबिल नहीं रहा
जिस दिल प नाज़ था मुझे, वह दिल नहीं रहा

जाता हूँ दाग़-ए-हसरत-ए-हस्ती लिये हुये
हूँ शम'-ए-कुश्तः, दर ख़ुर-ए-महफिल नहीं रहा

मरने की, अय दिल, और ही तदबीर कर, कि मैं
शायान-ए-दस्त-ओ-बाज़ु-ए-क़ातिल नहीं रहा

बर रु-ए-शश जिहत, दर-ए आईनः बाज़ है
याँ इम्तियाज़-ए-नाक़िस-ओ-कामिल नहीं रहा

वा कर दिये हैं शौक़ ने, बन्द-ए-नक़ाब-ए-हुस्न
ग़ैर अज़ निगाह, अब कोई हाइल नहीं रहा

गो मैं रहा रहीन-ए-सितमहा-ए-रोज़गार
लेकिन तिरे ख़याल से ग़ाफिल नहीं रहा

दिल से हवा-ए-किश्त-ए-वफ़ा मिट गई, कि वाँ
हासिल, सिवाय हसरत-ए-हासिल नहीं रहा

बेदाद-ए-'अिश्क़ से नहीं डरता, मगर असद
जिस दिल प नाज़ था मुझे, वह दिल नहीं रहा

४३

रश्क कहता है, कि उसका ग़ैर से इख़लास, हैफ़
'अक़्ल कहती है, कि वह बेमेह्र किस का आश्ना

ज़र्रः ज़र्रः साग़र-ए-मैख़ानः-ए-नैरँग है
गर्दिश-ए-मजनूँ, ब चश्मकहा-ए-लैला आश्ना

शौक़ है सामाँ तराज़-ए-नाज़िश-ए-अर्बाब-ए-'अिज्ज़
ज़र्रः सहरा दस्तगाह-ओ-क़तरः दरिया आश्ना

मैं, और इक आफ़त का टुकड़ा, वह दिल-ए-वहशी, कि है
'आफ़ियत का दुश्मन और आवारगी का आश्ना

शिकवः संज-ए-रश्क-ए-हमदीगर न रहना चाहिये
मेरा ज़ानू मूनिस और आईनः तेरा आश्ना

कोहकन, नक़्क़ाश-ए-यक तिम्साल-ए-शीरीं था, असद
सँग से सर मार कर होवे न पैदा आश्ना

ज़िक्र उस परीवश का, और फिर बयाँ अपना
बन गया रक़ीब, आखिर, था जो राज़दाँ अपना

मै वह क्यों बहुत पीते, बज़्म-ए-ग़ैर में, यारब
आजही हुआ मंज़ूर, उनको इम्तिहाँ अपना

मंज़र इक बलन्दी पर, और हम बना सकते
'अर्श से इधर होता, काशके मकाँ अपना

दे वह जिस क़दर ज़िल्लत, हम हँसी में टालेंगे
बारे आश्ना निकला, उनका पास्बाँ अपना

दर्द-ए-दिल लिखूँ कब तक, जाऊँ उनको दिखलादूँ
उँगलियाँ फ़िगार अपनी, ख़ामः ख़ूँचकाँ अपना

घिसते घिसते मिट जाता, आपने 'अबस बदला
नँग-ए-सिज्दः से मेरे, सँग-ए-आस्ताँ अपना

ता करे न ग़म्माज़ी, कर लिया है दुश्मन को
दोस्त की शिकायत में, हमने हमज़बाँ अपना

हम कहाँ के दाना थे, किस हुनर में यकता थे
बे सबब हुआ ग़ालिब, दुश्मन आस्माँ अपना

४५

सुरमः-ए-मुफ़्त-ए-नज़र हूँ, मिरी क़ीमत यह है
कि रहे चश्म-ए-ख़रीदार प एहसाँ मेरा

रुख़सत-ए-नालः मुझे दे, कि मबादा ज़ालिम
तेरे चेहरे से हो ज़ाहिर, ग़म-ए-पिन्हाँ मेरा

४६

ग़ाफ़िल ब वहम-ए-नाज़ ख़ुद आरा है, वर्नः याँ
बेशान.-ए-सबा नहीं तुर्रः गियाह का

बज़्म-ए-क़दह से 'ऐश-ए-तमन्ना न रख, कि रँग
सैद-ए-ज़िदाम जस्तः है, इस दाम गाह का

रहमत अगर क़ुबूल करे, क्या ब'ईद है
शर्मिन्दगी से 'उज़्र न करना गुनाह का

मक़्तल को किस निशात से जाता हूँ मैं, कि है
पुर गुल, खयाल-ए-ज़ख़्म से, दामन निगाह का

जाँ दर हवा-ए-यक निगह-ए-गर्म है, असद
परवानः है वकील, तिरे दाद ख़्वाह का

जौर से बाज़ आये पर बाज़ आयें क्या
कहते हैं, हम तुझको मुँह दिखलायें क्या

रात दिन, गर्दिश में हैं सात आस्माँ
हो रहेगा कुछ न कुछ, घबरायें क्या

लाग हो, तो उसको हम समझें लगाव
जब न हो कुछ भी, तो धोका खायें क्या

हो लिये क्यों नामःबर के साथ साथ
यारब, अपने ख़त को हम पहुँचायें क्या

मौज-ए-ख़ूँ, सर से गुज़र ही क्यों न जाय
आस्तान-ए-यार से उठ जायें क्या

'अुम्र भर देखा किये, मरने की राह
मर गये पर, देखिये, दिखलायें क्या

पूछते हैं वह, कि ग़ालिब कौन है
कोई बतलाओ, कि हम बतलायें क्या

४८

लताफ़त बेकसाफ़त जल्वः पैदा कर नहीं सकती
चमन जंगार है आईनः-ए-बाद-ए-बहारी का

हरीफ़-ए-जोशिश-ए-दरिया नहीं; ख़ुद्दारि-ए-साहिल
जहाँ साक़ी हो तू, बातिल है दा'वा होशियारी का

४९

'अिश्रत-ए-क़तरः है, दरिया में फ़ना हो जाना
दर्द का हद से गुज़रना, है दवा हो जाना

तुझसे, क़िस्मत में मिरी, सूरत-ए-क़ुफ़्ल-ए-अबजद
था लिखा, बात के बनते ही, जुदा हो जाना

दिल हुआ कशमकश-ए-चारः-ए-ज़हमत में तमाम
मिट गया घिसने में इस 'अुक़्दे का वा हो जाना

अब जफ़ा से भी हैं महरूम हम, अल्लह अल्लाह
इस क़दर दुश्मन-ए-अरबाब-ए-वफ़ा हो जाना

ज़ो'फ़ से, गिरियः मुबद्दल बदम-ए-सर्द हुआ
बावर आया हमें पानी का हवा हो जाना

दिल से मिटना तिरी अँगुश्त-ए-हिनाई का ख़्याल
हो गया, गोश्त से नाख़ुन का जुदा हो जाना

है मुझे, अब्र-ए-बहारी का बरस कर खुलना
रोते रोते ग़म-ए-फ़ुर्क़त में, फ़ना हो जाना

गर नहीं नक्हत-ए-गुल को तिरे कूचे की हवस
क्यों है, गर्द-ए-रह-ए-जौलान-ए-सबा हो जाना

ताकि तुझ पर खुले एʻजाज़-ए-हवा-ए-सैक़ल
देख बरसात में सब्ज़ आइने का हो जाना

बख़्शे है जल्व:-ए-गुल ज़ौक़-ए-तमाशा; ग़ालिब
चश्म को चाहिये हर रँग में वा हो जाना

५०

फिर हुआ वक़्त, कि हो बाल कुशा मौज-ए-शराब
दे बत-ए-मै को दिल-ओ-दस्त-ए-शना मौज-ए-शराब

पूछ मत, वज्ह-ए-सियह मस्ति-ए-अर्बाब-ए-चमन
साय:-ए-ताक में होती है हवा, मौज-ए-शराब

जो हुआ ग़र्क़:-ए-मै, बख़्त-ए-रसा रखता है
सर से गुज़रे प भी, है बाल-ए-हुमा, मौज-ए-शराब

है यह बरसात वह मौसम, कि 'अजब क्या है, अगर
मौज-ए-हस्ती को करे फ़ैज़-ए-हवा, मौज-ए-शराब

चार मौज उठती है तूफ़ान-ए-तरब से हर सू
मौज-ए-गुल, मौज-ए-शफक़, मौज-ए-सबा, मौज-ए-शराब

जिस क़दर रूह-ए-नबाती है जिगर तश्नः-ए-नाज़
दे है तस्कीं बदम-ए-आब-ए-बक़ा मौज-ए-शराब

बसकि दौड़े है रग-ए-ताक में ख़ूँ हो हो कर
शह्पर-ए-रँग से है बाल कुशा, मौज-ए-शराब

मौजः-ए-गुल से चराग़ाँ है, गुज़रगाह-ए-ख़याल
है तसव्वुर में ज़िबस, जल्वःनुमा मौज-ए-शराब

नश्शे के पर्दे में है मेह्व-ए-तमाशा-ए-दिमाग़
बसकि रखती है सर-ए-नशव-ओ-नुमा मौज-ए-शराब

एक 'आलम प है, तूफ़ानि-ए-कैफ़ीयत-ए-फस्ल
मौजः-ए-सब्ज़ः-ए-नौख़ेज़ से ता मौज-ए-शराब

शर्ह-ए-हँगामः-ए-हस्ती है, ज़िहे मौसम-ए-गुल
रहबर-ए-क़तरः बदरिया है, ख़ुशा मौज-ए-शराब

होश उड़ते हैं मिरे, जल्वः-ए-गुल देख असद
फिर हुआ वक़्त, कि हो बाल कुशा मौज-ए-शराब

५१

अफ़सोस, कि दन्दाँ का किया रिज़्क़; फ़लक ने
जिन लोगों की थी, दरख़ुर-ए-'अिक़्द-ए-गुहर, अँगुश्त

काफ़ी है निशानी तिरी, छल्ले का न देना
ख़ाली मुझे दिखला के, बवक़्त-ए-सफ़र, अँगुश्त

लिखता हूँ, असद, सोज़िश-ए-दिल से, सुख़न-ए-गर्म
ता रख न सके कोई मिरे हर्फ़ पर अँगुश्त

५२

रहा गर कोई ता क़यामत, सलामत
फिर इक रोज़ मरना है, हज़रत सलामत

जिगर को मिरे 'अिश्क़-ए-ख़ूँनाब: मशरब
लिखे है ख़ुदावन्द-ए-ने'मत सलामत

'अलर्रग़म-ए-दुश्मन, शहीद-ए-वफ़ा हूँ
मुबारक मुबारक, सलामत सलामत

नहीं गर सर-ओ-बर्ग-ए-इदराक-ए-मा'नी
तमाशा-ए-नैरँग-ए-सूरत, सलामत

५३

मुँद गईं, खोलते ही खोलते आँखें, ग़ालिब
यार लाये मिरी बालीं प उसे, पर किस वक़्त

५४

आमद-ए-ख़त से हुआ है सर्द जो, बाज़ार-ए-दोस्त
दूद-ए-शम'-ए-कुश्तः था, शायद ख़त-ए-रुख़सार-ए-दोस्त

अय दिल-ए-ना 'आक़िबत अन्देश ज़ब्त-ए-शौक़ कर
कौन ला सक्ता है ताब-ए-जल्वः-ए-दीदार-ए-दोस्त

ख़ानः वीराँ साज़ि-ए-हैरत तमाशा कीजिये
सूरत-ए-नक़्श-ए-क़दम, हूँ रफ़्तः-ए-रफ़्तार-ए-दोस्त

'अिश्क़ में, बेदाद-ए-रश्क-ए-ग़ैर ने मारा मुझे
कुश्तः-ए-दुश्मन हूँ आख़िर, गरचेः था बीमार-ए-दोस्त

चश्म-ए-मा रौशन, कि उस बेदर्द का दिल शाद है
दीदः-ए-पुरख़ूँ हमारा, साग़र-ए-सरशार-ए-दोस्त

ग़ैर, यों करता है मेरी पुरसिश, उसके हिज्र में
बे तकल्लुफ़ दोस्त हो जैसे कोई ग़मख़्वार-ए-दोस्त

ताकि मैं जानूँ, कि है इसकी रसाई वाँ तलक
मुझको देता है, पयाम-ए-वा'दः-ए-दीदार-ए-दोस्त

जबकि मैं करता हूँ अपना शिकवः-ए-ज़ो'फ़-ए-दिमाग़
सर करे है वह, हदीस-ए-ज़ुल्फ़-ए-'अंबर बार-ए-दोस्त

चुपके चुपके मुझको रोते देख पाता है, अगर
हँस के करता है बयान-ए-शोख़ि-ए-गुफ़्तार-ए-दोस्त

मेहरबानीहा-ए-दुश्मन की शिकायत कीजिये
या बयाँ कीजे, सिपास-ए-लज़्ज़त-ए-आज़ार-ए-दोस्त

यह ग़ज़ल अपनी मुझे जी से पसन्द आती है आप
है रदीफ़-ए-शे'र में, ग़ालिब, ज़िबस तकरार-ए-दोस्त

५५

गुलशन में बन्द-ओ-बस्त बरँग-ए-दिगर, है आज
क़ुमरी का तौक़ हल्क़ः-ए-बेरून-ए-दर, है आज

आता है एक पारः-ए-दिल हर फ़ुग़ाँ के साथ
तार-ए-नफ़स, कमन्द-ए-शिकार-ए-असर, है आज

अय 'आफ़ियत, किनारः कर, अय इन्तिज़ाम, चल
सैलाब-ए-गिरियः दर पै-ए-दीवार-ओ-दर, है आज

५६

लो हम मरीज़-ए-'अिश्क़ के तीमारदार हैं
अच्छा अगर न हो, तो मसीहा का क्या 'अिलाज

५७

नफ़स न अंजुमन-ए-आरज़ू से बाहर खेंच
अगर शराब नहीं, इन्तिज़ार-ए-साग़र खेंच

कमाल-ए-गर्मि-ए-स'अि-ए-तलाश-ए-दीद न पूछ
बरँग-ए-ख़ार मिरे आइने से जौहर खेंच

तुझे बहानः-ए-राहत है इन्तिज़ार, अय दिल
किया है किसने इशारः, कि नाज़-ए-बिस्तर खेंच

तिरी तरफ़ है ब हसरत नज़ारः-ए-नरगिस
बकोरि-ए-दिल-ओ-चश्म-ए-रक़ीब, साग़र खेंच

बनीम ग़मज़ः अदा कर, हक़-ए-वदी'अत-ए-नाज़
नियाम-ए-पर्दः-ए-ज़ख़्म-ए-जिगर से ख़ंजर खेंच

मिरे क़दह में है सहबा-ए-आतश-ए-पिन्हाँ
बरू-ए-सुफ़रा, कबाब-ए-दिल-ए-समन्दर खेंच

हुस्न, ग़मज़े की कशाकश से छुटा, मेरे बा'द
बारे, आराम से हैं अह्ल-ए-जफा, मेरे बा'द

मन्सब-ए-शेफ्तिगी के कोई क़ाबिल न रहा
हुई मा'ज़ूलि-ए-अन्दाज़-ओ-अदा, मेरे बा'द

शम'अ बुझती है, तो उस में से धुआँ उठता है
शो'लः-ए-'अिश्क़ सियह पोश हुआ, मेरे बा'द

ख़ूँ है दिल ख़ाक में; अह्वाल-ए-बुताँ पर, या'नी
इनके नाख़ुन हुये मुह्ताज-ए-हिना, मेरे बा'द

दरख़ुर-ए-'अर्ज़ नहीं, जौहर-ए-बेदाद को, जा
निगह-ए-नाज़ है सुरमे से खफ़ा, मेरे बा'द

है जुनूँ, अहल-ए-जुनूँ के लिये आग़ोश-ए-विदा'अ
चाक होता है गरीबाँ से जुदा, मेरे बा'द

कौन होता है हरीफ़-ए-मै-ए-मर्द अफ़गन-ए-'अिश्क़
है मुकर्रर लब-ए-साक़ी प सला, मेरे बा'द

ग़म से मरता हूँ, कि इतना नहीं दुनिया में कोई
कि करे ता'ज़ियत-ए-मेह्र-ओ-वफ़ा, मेरे बा'द

आये है बेकसि-ए-'अिश्क़ प रोना, ग़ालिब
किसके घर जायेगा सैलाब-ए-बला, मेरे बा'द

५९

बला से हैं, जो यह पेश-ए-नज़र दर-ओ-दीवार
निगाह-ए-शौक को हैं, बाल-ओ-पर दर-ओ-दीवार

वुफ़ूर-ए-अश्क ने काशाने का किया यह रँग
कि हो गये मिरे दीवार-ओ-दर, दर-ओ-दीवार

नहीं है सायः, कि सुनकर नवेद-ए-मक़दम-ए-यार
गये हैं चन्द क़दम पेश्तर, दर-ओ-दीवार

हुई है किस क़दर अरज़ानि-ए-मै-ए-जल्वः
कि मस्त है तिरे कूचे में हर दर-ओ-दीवार

जो है तुझे सर-ए-सौदा-ए-इन्तिज़ार, तो आ
कि हैं दुकान-ए-मता'-ए-नज़र दर-ओ-दीवार

हुजूम-ए-गिरियः का सामान कब किया मैं ने
कि गिर पड़े न मिरे पाँव पर दर-ओ-दीवार

वह आ रहा मिरे हमसाये में, तो साये से
हुये फ़िदा दर-ओ-दीवार पर, दर-ओ-दीवार

नज़र में खटके है, बिन तेरे, घर की आबादी
हमेशः रोते हैं हम, देखकर दर-ओ-दीवार

न पूछ बे ख़ुदि-ए-'ऐश-ए-मक़दम-ए-सैलाब
कि नाचते हैं पड़े, सर बसर दर-ओ-दीवार

न कह किसी से, कि ग़ालिब नहीं ज़माने में
हरीफ़-ए-राज़-ए-महब्बत, मगर दर-ओ-दीवार

६०

घर जब बना लिया तिरे दर पर, कहे बिग़ैर
जानेगा अब भी तू न मिरा घर कहे बिग़ैर

कहते हैं, जब रही न मुझे ताक़त-ए-सुख़न
जानूँ किसी के दिल की मैं क्योंकर, कहे बिग़ैर

काम उससे आ पड़ा है, कि जिसका जहान में
लेवे न कोई नाम, सितमगर कहे बिग़ैर

जी में ही कुछ नहीं है हमारे, वगरनः हम
सर जाये या रहे, न रहें पर कहे बिग़ैर

छोड़ूँगा मै न उस बुत-ए-काफ़िर का पूजना
छोड़े न ख़ल्क़ गो मुझे काफ़िर कहे बिग़ैर

मक़सद है नाज़-ओ-ग़मज़ः, वले गुफ्तगू में, काम
चलता नहीं है, दश्नः-ओ-ख़ंजर कहे बिग़ैर

हरचन्द, हो मुशाहदः-ए-हक़ की गुफ़्तगू
बनती नहीं है, बादः-ओ-साग़र कहे बिग़ैर

बहरा हूँ मैं, तो चाहिये दूना हो इल्तिफ़ात
सुनता नहीं हूँ बात, मुकर्रर कहे बिग़ैर

ग़ालिब, न कर हुज़ूर में तू बार बार 'अर्ज़
ज़ाहिर है तेरा हाल सब उनपर, कहे बिग़ैर

६१

क्यों जल गया न ताब-ए-रुख़-ए-यार देख कर
जलता हूँ, अपनी ताक़त-ए-दीदार देख कर

आतश परस्त कहते हैं अहल-ए-जहाँ मुझे
सरगर्म-ए-नालःहा-ए-शररबार देख कर

क्या आबरू-ए-'अिश्क़, जहाँ 'आम हो जफ़ा
रुकता हूँ तुम को बेसबब आज़ार देख कर

आता है मेरे क़त्ल को, पर जोश-ए-रश्क से
मरता हूँ उसके हाथ में तलवार देख कर

साबित हुआ है, गर्दन-ए-मीना प ख़ून-ए-ख़ल्क
लरज़े है मोज-ए-मै तिरी रफ्तार देख कर

वा हसरता, कि यार ने खेंचा सितम से हाथ
हम को हरीस-ए-लज़्ज़त-ए-आज़ार देख कर

बिक जाते हैं हम आप, मता'-ए-सुख़न के साथ
लेकिन, 'अयार-ए-तब'-ए-ख़रीदार देख कर

ज़ुन्नार बाँध, सुब्हः-ए-सद् दानः तोड़ डाल
रहरौ चले है राह को, हमवार देख कर

इन आबलों से पाँव के, घबरा गया था मैं
जी ख़ुश हुआ है राह को पुर ख़ार देख कर

क्या बदगुमाँ है मुझ से, कि आईने में मिरे
तूती का 'अक्स समझे है, ज़ंगार देख कर

गिरनी थी हम प बर्क़-ए-तजल्ली, न तूर पर
देते हैं बादः, ज़र्फ़-ए-क़दह ख़्वार देख कर

सर फोड़ना वह, ग़ालिब-ए-शोरीदः हाल का
याद आ गया मुझे, तिरी दीवार देख कर

लरज़ता है मिरा दिल ज़हमत-ए-मेह्र-ए-दरख़्शाँ पर
मैं हूँ वह क़तरः-ए-शबनम, कि हो ख़ार-ए-बयाबाँ पर

न छोड़ी हज़रत-ए-यूसुफ़ ने याँ भी ख़ानः आराई
सफ़ेदी दीदः-ए-या'क़ूब की, फिरती है ज़िन्दाँ पर

फ़ना ता'लीम-ए-दर्स-ए-बेख़ुदी हूँ, उस ज़माने से
कि मजनूँ लाम अलिफ़ लिखता था दीवार-ए-दबिस्ताँ पर

फ़राग़त किस क़दर रहती मुझे, तशवीश-ए-मरहम से
बहम गर सुल्ह् करते पारःहा-ए-दिल नमकदाँ पर

नहीं इक़्लीम-ए-उल्फ़त में, कोई तूमार-ए-नाज़ ऐसा
कि पुश्त-ए-चश्म से जिसके न होवे मुह्र 'अुन्वाँ पर

मुझे अब देख कर अब्र-ए-शफ़क़ आलूदः, याद आया
कि फ़ुर्क़त में तिरी, आतश बरसती थी गुलिस्ताँ पर

बजुज़ परवाज़-ए-शौक़-ए-नाज़, क्या बाक़ी रहा होगा
क़यामत इक हवा-ए-तुँद है, ख़ाक-ए-शहीदाँ पर

न लड़ नासेह् से, ग़ालिब, क्या हुआ, गर उसने शिद्दत की
हमारा भी तो, आख़िर, ज़ोर चलता है गरीबाँ पर

है बसकि, हर इक उनके इशारे में निशाँ और
करते हैं महब्बत, तो गुज़रता है गुमाँ और

यारब, न वह समझे हैं, न समझेंगे मिरी बात
दे और दिल उनको, जो न दे मुझको ज़बाँ और

अबरू से है क्या, उस निगह-ए-नाज़ को, पैवन्द
है तीर मुकर्रर, मगर इसकी है कमाँ और

तुम शहर में हो, तो हमें क्या ग़म, जब उठेंगे
ले आयेंगे बाज़ार से, जाकर दिल-ओ-जाँ और

हरचन्द सुबुक दस्त हुये, बुत शिकनी में,
हम हैं, तो अभी राह में है सँग-ए-गिराँ और

है ख़ून-ए-जिगर जोश में, दिल खोल के रोता
होते जो कई दीदः-ए-ख़ूँनाबः फ़िशाँ और

मरता हूँ इस आवाज़ प, हरचन्द सर उड़जाय
जल्लाद को, लेकिन, वह कहे जायें, कि हाँ और

लोगों को है ख़ुर्शीद-ए-जहाँ ताब का धोका
हर रोज़ दिखाता हूँ मैं इक दाग़-ए-निहाँ और

लेता, न अगर दिल तुम्हें देता, कोई दम चैन
करता, जो न मरता कोई दिन, आह-ओ-फ़ुग़ाँ और

पाते नहीं जब राह, तो चढ़ जाते हैं नाले
रुकती है मिरी तब'अ, तो होती है रवाँ और

हैं और भी दुनिया में सुख़नवर बहुत अच्छे
कहते हैं, कि ग़ालिब का है अन्दाज़-ए-बयाँ और

६४

सफ़ा-ए-हैरत-ए-आईनः है, सामान-ए-रँग आख़िर
तग़य्युर आब-ए-बर जा माँदः का, पाता है रँग आख़िर

न की सामान-ए-'ऐश-ओ-जाह ने तद्बीर वह्शत की
हुआ जाम-ए-ज़मर्रुद भी मुझे, दाग़-ए-पलँग आख़िर

६५

जुनूँ की दस्तगीरी किस से हो, गर हो न 'उरियानी
गरीबाँ चाक का हक़ हो गया है, मेरी गर्दन पर

बरँग-ए-काग़ज़-ए-आतश ज़दः नैरँग-ए-बेताबी
हज़ार आईनः दिल बाँधे है बाल-ए-यक तपीदन पर

फ़लक से, हमको 'ऐश-ए-रफ्तः का, क्या क्या तक़ाज़ा है
मता'-ए-बुर्दः को, समझे हुये हैं क़र्ज़, रहज़न पर

हम और वह बेसबब रँज, आशना दुश्मन, कि रखता है
शु'आ'-ए-मेह्र से, तुहमत निगह की, चश्म -ए-रौज़न पर

फ़ना को सौंप, गर मुश्ताक़ है अपनी हक़ीक़त का
फरोग़-ए-ताले'-ए-ख़ाशाक है मौक़ूफ़ गिलख़न पर

असद बिस्मिल है किस अन्दाज़ का, क़ातिलसे कहता है
कि, मश्क़-ए-नाज़ कर, ख़ून-ए-दो 'आलम मेरी गर्दन पर

६६

सितम कश मस्लिहत से हूँ, कि ख़ूबाँ तुझ प 'आशिक़ है
तकल्लुफ़ बर तरफ़, मिल जायगा तुझसा रक़ीब आख़िर

६७

लाज़िम था कि देखो मिरा रस्तः कोई दिन और
तनहा गये क्यों अब रहो तनहा कोई दिन और

मिट जायेगा सर, गर तिरा पत्थर न घिसेगा
हूँ दर प तिरे नासियः फ़रसा कोई दिन और

आये हो कल और आज ही कहते हो, कि जाऊँ
माना, कि हमेशः नहीं अच्छा, कोई दिन और

जाते हुये कहते हो, क़यामत को मिलेंगे
क्या ख़ूब, क़यामत का है गोया कोई दिन और

हाँ अय फ़लक-ए-पीर, जवाँ था अभी 'आरिफ़
क्या तेरा बिगड़ता, जो न मरता कोई दिन और

तुम माह-ए-शब-ए-चारदहुम थे, मिरे घर के
फिर क्यों न रहा घर का वह नक़्शा कोई दिन और

तुम कौन से थे ऐसे खरे, दाद-ओ-सितद के
करता मलकुल मौत तक़ाज़ा, कोई दिन और

मुझसे तुम्हें नफ़रत सही, नय्यर से लड़ाई
बच्चों का भी देखा न तमाशा कोई दिन और

गुज़री न बहरहाल यह मुद्दत ख़ुश-ओ-नाख़ुश
करना था, जवाँमर्ग, गुज़ारा कोई दिन और

नादाँ हो, जो कहते हो, कि क्यों जीते हो ग़ालिब
क़िस्मत में है, मरने की तमन्ना कोई दिन और

६८

फारिग़ मुझे न जान, कि मानिन्द-ए-सुबह-ओ-मेह्र
है दाग़-ए-'अिश्क़, ज़ीनत-ए-जैब-ए-कफ़न हनोज़

है नाज़-ए-मुफ़्लिसाँ ज़र-ए-अज़दस्त रफ़्तः पर
हूँ गुल फ़रोश-ए-शोखि-ए-दाग़-ए-कुहन हनोज़

मैख़ान:-ए-जिगर में यहाँ ख़ाक भी नहीं
खमियाज़ा खेंचे है बुत-ए-बेदाद फ़न हनोज़

६९

हरीफ़-ए-मतलब-ए-मुश्किल नहीं, फ़ुसून-ए-नियाज़
दु'आ क़ुबूल हो यारब, कि 'अुम्र-ए-ख़िज़्र दराज़

न हो बहरज़ः बयाबाँ नवर्द-ए-वहम-ए-वुजूद
हनोज़ तेरे तसव्वुर में है नशेब-ओ-फ़राज़

विसाल जल्वः तमाशा है, पर दिमाग़ कहाँ
कि दीजे आईन:-ए-इन्तिज़ार को परवाज़

हर एक ज़र्र:-ए-'आशिक़ है आफ़्ताब परस्त
गई न ख़ाक हुये पर, हवा-ए-जल्व:-ए-नाज़

न पूछ वुस'अत-ए-मैखानः-ए-जुनूँ, ग़ालिब
जहाँ; यह कासः-ए-गर्दूं, है एक ख़ाक अन्दाज़

७०

वुस'अत-ए-स'अि-ए-करम देख, कि सर ता सर-ए-ख़ाक
गुज़रे है आबलः पा अब्र-ए-गुहर बार हनोज़

यक क़लम काग़ज़-ए-आतश ज़दः, है सफ़्हः-ए-दश्त
नक़्श-ए-पा में, है तप-ए-गर्मि-ए-रफ़्तार हनोज़

७१

क्योंकर उस बुत से रखूँ जान 'अज़ीज़
क्या नहीं है मुझे ईमान 'अज़ीज़

दिल से निकला, प न निकला दिल से
है तिरे तीर का पैकान 'अज़ीज़

ताब लाये ही बनेगी, ग़ालिब
वाक़ि'अः सख़्त है और जान 'अज़ीज़

न गुल-ए-नग़मः हूँ, न पर्दः-ए-साज़
मैं हूँ अपनी शिकस्त की आवाज़

तू, और आराइश-ए-ख़म-ए-काकुल
मैं, और अन्देशहःहा-ए-दूर-ओ-दराज़

लाफ़-ए-तमकीं, फ़रेब-ए-सादः दिली
हम हैं, और राज़हा-ए-सीनः गुदाज़

हूँ गिरफ़्तार-ए-उल्फ़त-ए-सय्याद
वर्नः बाक़ी है ताक़त-ए-परवाज़

वह भी दिन हो, कि उस सितमगर से
नाज़ खेंचूँ, बजाय हसरत-ए-नाज़

नहीं दिल में मिरे, वह क़तरः-ए-ख़ूँ
जिस से मिश़गाँ हुई न हो गुलबाज़

अय तिरा ग़मज़ः, यक क़लम अँगेज़
अय तिरा ज़ुल्म, सर बसर अन्दाज़

तू हुआ जल्वःगर, मुबारक हो
रेज़िश-ए-सिज्दः-ए-जबीन-ए-नियाज़

मुझको पूछा, तो कुछ ग़ज़ब न हुआ
मैं ग़रीब और तू ग़रीब नवाज़

असदुल्लाह ख़ाँ तमाम हुआ
अय दरेग़ा, वह रिन्द-ए-शाहिद बाज़

७३

मुश़दः अय ज़ौक़-ए-असीरी, कि नज़र आता है
दाम ख़ाली, क़फ़स-ए-मुर्ग़-ए-गिरफ़्तार के पास

जिगर-ए-तश्नः-ए-आज़ार, तसल्ली न हुआ
जू-ए-ख़ूँ हम ने बहाई बुन-ए-हर ख़ार के पास

मुँद गईं खोलते ही खोलते आँखें, हय, हय
ख़ूब वक़्त आये तुम, इस 'आशिक़-ए-बीमार के पास

मैं भी रुक रुक के न मरता, जो ज़बाँ के बदले
दश्नः इक तेज़ सा होता, मिरे ग़मख़्वार के पास

दहन-ए-शेर में जा बैठिये, लेकिन अय दिल
न खड़े हूजिये ख़ूबान-ए-दिल आज़ार के पास

देख कर तुझको, चमन बसकि नमू करता है
ख़ुद बख़ुद पहुँचे है गुल, गोशः-ए-दस्तार के पास

मर गया फोड़ के सर, ग़ालिब-ए-वह्शी, हय, हय
बैठना उसका वह आकर तिरी दीवार के पास

७४

न लेवे गर खस-ए-जौहर, तरावत सब्ज़ः-ए-ख़त से
लगावे ख़ानः-ए-आईनः में रू-ए-निगार आतश

फ़रोग़-ए-हुस्न से होती है हल्ल-ए-मुश्किल-ए-'आशिक़
न निक्ले शम'अ के पा से, निकाले गर न ख़ार आतश

७५

जाद:-ए-रह ख़ुर को वक़्त-ए-शाम है तार-ए-शु'आ'अ
चर्ख़ वा करता है माह-ए-नौ से आग़ोश-ए-विदा'अ

७६

रुख-ए-निगार से, है सोज़-ए-जाविदानि-ए-शम्'अ
हुई है आतश-ए-गुल, आब-ए-ज़िन्दगानि-ए-शम्'अ

ज़बान-ए-अहल-ए-ज़बाँ में, है मर्ग ख़ामोशी
यह बात बज़्म में, रौशन हुई ज़बानि-ए-शम्'अ

करे है सर्फ़ ब ईमा-ए-शो'लः क़िस्सः तमाम
बतर्ज़-ए-अह्ल-ए-फ़ना, है फ़सानः ख़्वानि-ए-शम्'अ

ग़म उसको हसरत-ए-परवानः का है, अय शो'लः
तिरे लरज़ने से ज़ाहिर है नातवानि-ए-शम्'अ

तिरे ख़याल से रुह एह्तिज़ाज़ करती है
ब जल्वः रेज़ि-ए-बाद-ओ-ब परफ़िशानि-ए-शम्'अ

निशात-ए-दाग़-ए-ग़म-ए-'अिश्क़ की बहार, न पूछ
शिगुफ़्तगी है शहीद-ए-गुल-ए-ख़ज़ानि-ए-शम्'अ

जले है देख के बालीन-ए-यार पर मुझको
न क्यों हो दिल प मिरे, दाग़-ए-बदगुमानि-ए-शम्'अ

७७

बीम-ए-रक़ीब से नहीं करते विदा'-ए-होश
मजबूर याँ तलक हुये, अय इख़्तियार, हैफ

जलता है दिल, कि क्यों न हम इक बार जल गये
अय नातमामि-ए-नफ़स-ए-शो'लः बार, हैफ़

ज़ख़्म पर छिड़कें कहाँ, तिफ़्लान-ए-बेपरवा, नमक
क्या मज़ा होता, अगर पत्थर में भी होता, नमक

गर्द-ए-राह-ए-यार है सामान-ए-नाज़-ए-ज़ख़्म-ए-दिल
वर्नः होता है जहाँ में किस क़दर पैदा, नमक

मुझको अरज़ानी रहे, तुझको मुबारक हूजियो
नालः-ए-बुलबुल का दर्द, और खन्दः-ए-गुल का नमक

शोर-ए-जौलाँ था किनार-ए-बह्र पर किसका, कि आज
गर्द-ए-साहिल है, बज़ख़्म-ए-मौजः-ए-दरिया, नमक

दाद देता है मिरे ज़ख़्म-ए-जिगर की, वाह, वाह
याद करता है मुझे, देखे है वह जिस जा, नमक

छोड़ कर जाना तन-ए-मजरूह-ए-'आशिक़, हैफ़ है
दिल तलब करता है ज़ख़्म, और माँगे हैं आ'ज़ा, नमक

ग़ैर की मिन्नत न खेंचूँगा, पै-ए-तौक़ीर-ए-दर्द
ज़ख़्म मिस्ल-ए-ख़न्दः-ए-क़ातिल है, सर ता पा नमक

याद हैं, ग़ालिब, तुझे वह दिन, कि वज्द-ए-ज़ौक़ में
ज़ख़्म से गिरता, तो मैं पलकों से चुनता था नमक

आह को चाहिये इक 'अुम्र, असर होने तक
कौन जीता है तिरी ज़ुल्फ़ के सर होने तक

दाम-ए-हर मौज में है, हल्क़ः-ए-सद काम-ए-निहँग
देखें क्या गुज़रे है क़तरे प, गुहर होने तक

'आशिक़ी सब्र तलब और तमन्ना बेताब
दिल का क्या रँग करूँ, ख़ून-ए-जिगर होने तक

हमने माना, कि तग़ाफ़ुल न करोगे; लेकिन
ख़ाक हो जायेंगे हम, तुमको ख़बर होने तक

परतव-ए-ख़ुर से है शबनम को, फ़ना की ता'लीम
मैं भी हूँ, एक 'अिनायत की नज़र होने तक

यक नज़र बेश नहीं, फ़ुर्सत-ए-हस्ती ग़ाफ़िल
गर्मि-ए-बज़्म है, इक रक़्स-ए-शरर होने तक

ग़म-ए-हस्ती का, असद किससे हो जुज़ मर्ग 'अिलाज
शम'अ हर रँग में जलती है सहर होने तक

८०

गर तुझको है यक़ीन-ए-इजाबत, दु'आ न माँग
या'नी बिग़ैर-ए-यक दिल-ए-बेमुद्द'आ, न माँग

आता है दाग़-ए-हसरत-ए-दिल का शुमार याद
मुझसे मिरे गुनह का हिसाब, अय खुदा न माँग

८१

है किस क़दर हलाक-ए-फ़रेब-ए-वफ़ा-ए-गुल
बुलबुल के कार-ओ-बार प हैं ख़न्दःहा-ए-गुल

आज़ादि-ए-नसीम मुबारक, कि हर तरफ़
टूटे पड़े हैं हल्क़ः-ए-दाम-ए-हवा-ए-गुल

जो था, सो मौज-ए-रँग के धोके में रह गया
अय वाये, नालः-ए-लब-ए-ख़ूनीं नवा-ए-गुल

ख़ुश हाल उस हरीफ़-ए-सियह मस्त का, कि जो
रखता हो मिस्ल-ए-सायः-ए-गुल, सर ब पा-ए-गुल

ईजाद करती है उसे तेरे लिये, बहार
मेरा रक़ीब है, नफ़स-ए-'अित्र सा-ए-गुल

शर्मिन्दः रखते हैं मुझे बाद-ए-बहार से
मीना-ए-बे शराब-ओ-दिल-ए-बे हवा-ए-गुल

सतवत से तेरे जल्वः-ए-हुस्न-ए-ग़यूर की
ख़ूँ है मिरी निगाह में रँग-ए-अदा-ए-गुल

तेरे ही जल्वे का है यह धोका, कि आज तक
बे इख़्तियार दौड़े है गुल दर क़फ़ा-ए-गुल

ग़ालिब, मुझे है उससे हम आग़ोशी आरज़ू
जिसका ख़याल है गुल-ए-जैब-ए-क़बा-ए-गुल

८२

ग़म नहीं होता है आज़ादों को, बेश अज़ यक नफ़स
बर्क़ से करते हैं रौशन, शम्'अ-ए-मातम खानः हम

महफ़िलें बरहम करे है, गँजफ़ः बाज़-ए-ख़याल
हैं वरक़ गर्दानि-ए-नैरँग-ए-यक बुतख़ानः हम

बावुजूद-ए-यक जहाँ, हँगामः पैदाई नहीं
हैं चराग़ान-ए-शबिस्तान-ए-दिल-ए-परवानः हम

ज़ो'फ़ से है, ने क़ना'अत से, यह तर्क-ए-जुस्तुजू
हैं वबाल-ए-तकयः गाह-ए-हिम्मत-ए-मर्दानः हम

दाइमुल हब्स इस में हैं लाखों तमन्नायें, असद
जानते हैं सीनः-ए-पुरख़ूँ को ज़िन्दाँ ख़ानः हम

८३

ब नालः हासिल-ए-दिल बस्तगी फ़राहम कर
मता'-ए-ख़ानः-ए-ज़ंजीर, जुज़ सदा, मा'लूम

८४

मुझको दयार-ए-ग़ैर में मारा, वतन से दूर
रख ली मिरे ख़ुदा ने, मिरी बेकसी की शर्म

वह हल्क़ःहा-ए-ज़ुल्फ़, कमीं में हैं, अय ख़ुदा
रख लीजो मेरे दा'वः-ए-वारस्तगी की शर्म

८५

लूँ दाम बख़्त-ए-ख़ुफ़्तः से, यक ख़्वाब-ए-ख़ुश, वले
ग़ालिब, यह ख़ौफ़ है, कि कहाँ से अदा करूँ

वह फ़िराक़ और वह विसाल कहाँ
वह शब-ओ-रोज़-ओ-माह-ओ-साल कहाँ

फ़ुर्सत-ए-कार-ओ-बार-ए-शौक़ किसे
ज़ौक़-ए-नज़्ज़ार:-ए-जमाल कहाँ

दिल तो दिल, वह दिमाग़ भी न रहा
शोर-ए-सौदा-ए-ख़त्त-ओ-ख़ाल कहाँ

थी वह इक शख़्स के तसव्वुर से
अब वह र'अनाइ-ए-खयाल कहाँ

ऐसा आसाँ नहीं, लहू रोना
दिल में ताक़त, जिगर में हाल कहाँ

हम से छूटा क़िमार ख़ान:-ए-'अिश्क़
वाँ जो जावें, गिरह में माल कहाँ

फ़िक्र-ए-दुनिया में सर खपाता हूँ
मैं कहाँ और यह वबाल कहाँ

मुज़महिल होगये क़ुवा, ग़ालिब
वह 'अनासिर में ए'तिदाल कहाँ

की वफ़ा हम से, तो ग़ैर उसको जफा कहते हैं
होती आई है, कि अच्छों को बुरा कहते हैं

आज हम अपनी परीशानि-ए-ख़ातिर उनसे
कहने जाते तो हैं, पर देखिये, क्या कहते हैं

अगले वक़्तों के हैं यह लोग, इन्हें कुछ न कहो
जो मै-ओ-नग़्मः को, अन्दोह रुबा कहते हैं

दिल में आजाये है, होती है जो फ़ुर्सत ग़श से
और फिर कौन से नाले को रसा कहते हैं

है परे सरहद-ए-इदराक से, अपना मस्जूद
क़िबले को अहल-ए-नज़र क़िबलः नुमा कहते हैं

पा-ए-अफ़गार प, जबसे तुझे रह्म आया है
ख़ार-ए-रह को तिरे हम, मेह्र गिया कहते हैं

इक शरर दिल में है, उससे कोई घबरायेगा क्या
आग मतलूब है हमको, जो हवा कहते हैं

देखिये लाती है उस शोख़ की नख़्वत, क्या रँग
उसकी हर बात प हम, नाम-ए-ख़ुदा, कहते हैं

वह्शत-ओ-शेफ़्तः अब मरसियः कहवें, शायद
मर गया ग़ालिब-ए-आशुफ़्तः नवा, कहते हैं

८८

आबरू क्या ख़ाक उस गुल की, कि गुलशन में नहीं
है गरीबाँ नँग-ए-पैराहन, जो दामन में नहीं

ज़ो'फ़ से, अय गिरियः, कुछ बाक़ी मिरे तन में नहीं
रँग हो कर उड़ गया, जो ख़ूँ कि दामन में नहीं

हो गये हैं जम'अ, अज्ज़ा-ए-निगाह-ए-आफ़ताब
ज़र्रे, उस के घर की दीवारों के रौज़न में नहीं

क्या कहूँ तारीकि-ए-ज़िन्दान-ए-ग़म, अंधेर है
पँबः नूर-ए-सुब्ह से कम, जिस के रौज़न में नहीं

रौनक़-ए-हस्ती है 'अिश्क़-ए-ख़ानः वीराँ साज़ से
अंजुमन बे शम्'अ है, गर बर्क़ ख़िर्मन में नहीं

ज़ख़्म सिलवाने से, मुझ पर चारः जूई का है ता'न
ग़ैर समझा है; कि लज़्ज़त ज़ख़्म-ए-सूज़न में नहीं

बसकि हैं हम इक बहार-ए-नाज़ के मारे हुये
जल्वः-ए-गुल के सिवा, गर्द अपने मदफ़न में नहीं

क़तरः क़तरः, इक हयूला है, नये नासूर का
ख़ूँ भी, ज़ौक़-ए-दर्द से, फ़ारिग़ मिरे तन में नहीं

ले गई साक़ी की नख़्वत, क़ुल्ज़ुम आशामी मिरी
मौज-ए-मै की आज रग मीना की गर्दन में नहीं

हो फ़िशार-ए-ज़ो'फ़ में क्या नातवानी की नुमूद
क़द के झुकने की भी गुंजाइश मिरे तन में नहीं

थी वतन में शान क्या ग़ालिब, कि हो ग़ुर्बत में क़द्र
बे तकल्लुफ़, हूँ वह मुश्त-ए-ख़स, कि गुलख़न में नहीं

८९

'ओह्दे से मद्‌ह-ए-नाज़ के, बाहर न आ सका
गर इक अदा हो, तो उसे अपनी क़ज़ा कहूँ

हल्क़े हैं चश्महा-ए-कुशादः ब सू-ए-दिल
हर तार-ए-ज़ुल्फ़ को निगह-ए-सुर्मः सा कहूँ

मैं और सद हज़ार नवा-ए-जिगर ख़राश
तू, और एक वह न शुनीदन, कि क्या कहूँ

ज़ालिम, मिरे गुमाँ से मुझे मुनफ़'इल न चाह
हय, हय, ख़ुदा न करदः, तुझे बेवफ़ा कहूँ

९०

मेह्रबाँ होके बुलालो मुझे, चाहो जिस वक़्त
मैं गया वक़्त नहीं हूँ, कि फिर आ भी न सकूँ

ज़ो'फ़ में, ता'नः-ए-अग़यार का शिकवा क्या है
बात कुछ सर तो नहीं है, कि उठा भी न सकूँ

ज़ह्र मिलता ही नहीं मुझको, सितमगर वर्नः
क्या क़सम है तिरे मिलने की, कि खा भी न सकूँ

९१

हमसे खुल जाओ, बवक़्त-ए-मै परस्ती, एक दिन
वर्नः हम छेड़ेंगे, रखकर 'अुज़्र-ए-मस्ती एक दिन

ग़र्रः-ए-औज-ए-बिना-ए-'आलम-ए-इम्काँ न हो
इस बलन्दी के नसीबों में है पस्ती, एक दिन

क़र्ज़ की पीते थे मै, लेकिन समझते थे, कि हाँ
रँग लायेगी हमारी फाक़ः मस्ती, एक दिन

नग़्मःहा-ए-ग़म को भी, अय दिल ग़नीमत जानिये
बेसदा हो जायगा, यह साज़-ए-हस्ती, एक दिन

धौल धप्पा उस सरापा नाज़ का शेवः नहीं
हम ही कर बैठे थे, ग़ालिब, पेश दस्ती एक दिन

९२

हम पर, जफ़ा से, तर्क-ए-वफ़ा का गुमाँ नहीं
इक छेड़ है, वगरनः मुराद इम्तिहाँ नहीं

किस मुँह से शुक्र कीजिये, इस लुत्फ़-ए-ख़ास का
पुरसिश है और पा-ए-सुख़न दरमियाँ नहीं

हमको सितम 'अज़ीज़, सितमगर को हम 'अज़ीज़
ना मेहरबाँ नहीं है, अगर मेहरबाँ नहीं

बोसः नहीं, न दीजिये, दुश्नाम ही सही
आख़िर ज़बाँ तो रखते हो तुम, गर दहाँ नहीं

हरचन्द जाँ गुदाज़ि-ए-क़हर-ओ-'अिताब है
हरचन्द पुश्त गर्मि -ए- ताब -ओ- तवाँ नहीं

जाँ मुतरिब-ए-तरानः-ए-हल मिन मज़ीद है
लब पर्दः सँज-ए-ज़मज़मः-ए-अलअमाँ नहीं

ख़ंजर से चीर सीनः, अगर दिल न हो दुनीम
दिल में छुरी चुभो, मिश़ः गर ख़ूँचकाँ नहीं

है नँग-ए-सीनः, दिल अगर आतश कदः न हो
है 'आर-ए-दिल, नफ़स अगर आज़र फ़िशाँ नहीं

नुक़्साँ नहीं जुनूँ में, बला से हो घर खराब
सौ गज़ ज़मीं के बदले; बयाबाँ गिराँ नहीं

कहते हो, क्या लिखा है तिरी सरनविश्त में
गोया जबीं प सिज्दः-ए-बुत का निशाँ नहीं

पाता हूँ उस से दाद कुछ अपने कलाम की
रूहुलक़ुदुस अगरचेः, मिरा हमज़बाँ नहीं

जाँ है बहा-ए-बोसः, वले क्यों कहे, अभी
ग़ालिब को जानता है, कि वह नीमजाँ नहीं

९३

माने'-ए-दश्त नवर्दी कोई तदबीर नहीं
एक चक्कर है, मिरे पाँव में ज़ंजीर नहीं

शौक़ उस दश्त में दौड़ाये है मुझको, कि जहाँ
जादः ग़ैर अज़ निगह-ए-दीदः-ए-तस्वीर नहीं

हसरत-ए-लज़्ज़त-ए-आज़ार रही जाती है
जादः-ए-राह-ए-वफ़ा, जुज़ दम-ए-शमशीर नहीं

रँज-ए-नौमीदि-ए-जावेद, गवारा रहियो
ख़ुश हूँ गर नालः ज़बूनी कश-ए-तासीर नहीं

सर खुजाता है, जहाँ ज़ख़्म-ए-सर अच्छा हो जाय
लज़्ज़त-ए-सँग ब अन्दाज़ः-ए-तक़रीर नहीं

जब करम रुख़सत-ए-बेबाकि-ओ-गुस्ताख़ी दे
कोई तक़सीर बजुज़ ख़जलत-ए-तक़सीर नहीं

ग़ालिब, अपना यह 'अक़ीदः है, बक़ौल-ए-नासिख़
आप बेबहरः है, जो मो'तक़िद-ए-मीर नहीं

९४

मत मर्दुमक-ए-दीदः में समझो यह निगाहें
हैं जम'अ सुवैदा-ए-दिल-ए-चश्म में आहें

९५

बशकाल-ए-गिरियः-ए-'आशिक़ है, देखा चाहिये
खिल गई मानिन्द-ए-गुल, सौ जा से दीवार-ए-चमन

उल्फ़त-ए-गुल से ग़लत है दा'वः-ए-वारस्तगी
सर्व है बावस्फ़-ए-आज़ादी गिरफ़्तार-ए-चमन

९६

'अिश्क़ तासीर से नौमीद नहीं
जाँ सुपारी शजर-ए-बेद नहीं

सल्तनत दस्त बदस्त आई है
जाम-ए-मै, ख़ातम-ए-जमशेद नहीं

है तजल्ली तिरी सामान-ए-वुजूद
ज़र्रः बे परतव-ए-खुरशीद नहीं

राज़-ए-मा'शूक़ न रुस्वा हो जाये
वर्नः मर जाने में कुछ भेद नहीं

गर्दिश-ए-रँग-ए-तरब से डर है
ग़म-ए-महरूमि-ए-जावेद नहीं

कहते हैं, जीते हैं उम्मीद प लोग
हम को जीने की भी उम्मीद नहीं

९७

जहाँ तेरा नक़्श-ए-क़दम देखते हैं
ख़ियाबाँ ख़ियाबाँ इरम देखते हैं

दिल आशुफ़्तगाँ ख़ाल-ए-कुंज-ए-दहन के
सुवैदा में सैर-ए-'अदम देखते हैं

तिरे सर्व क़ामत से, इक क़द्द-ए-आदम
क़यामत के फ़ितने को, कम देखते हैं

तमाशा कर अय महव-ए-आईनादारी
तुझे किस तमन्ना से हम देखते हैं

सुराग़-ए-तुफ़-ए-नाल: ले, दाग़-ए-दिल से
कि शब रौ का नक़्श-ए-क़दम देखते हैं

बना कर फ़क़ीरों का हम भेस, ग़ालिब
तमाशा-ए-अहल-ए-करम देखते हैं

९८

मिलती है ख़ू-ए-यार से नार, इल्तहाब में
काफ़िर हूँ, गर न मिलती हो राहत 'अज़ाब में

कब से हूँ, क्या बताऊँ, जहान-ए-ख़राब में
शबहा-ए-हिज्र को भी रखूँ गर हिसाब में

ता फिर न इन्तिज़ार में नीन्द आये 'अुम्र भर
आने का वा'द: कर गये, आये जो ख़्वाब में

क़ासिद के आते आते, ख़त इक और लिख रखूँ
मैं जानता हूँ, जो वह लिखेंगे जवाब में

मुझ तक कब, उनकी बज़्म में, आता था दौर-ए-जाम
साक़ी ने कुछ मिला न दिया हो शराब में

जो मुन्किर-ए-वफ़ा हो, फ़रेब उस प क्या चले
क्यों बदगुमाँ हूँ दोस्त से, दुश्मन के बाब में

मैं मुज़्तरिब हूँ वस्ल में, ख़ौफ़-ए-रक़ीब से
डाला है तुमको वहम ने, किस पेच-ओ-ताब में

मैं और हज़्ज़-ए-वस्ल, ख़ुदासाज़ बात है
जाँ नज़्र देनी भूल गया, इज़्तिराब में

है तेवरी चढ़ी हुई, अन्दर निक़ाब के
है इक शिकन पड़ी हुई, तर्फ़-ए-निक़ाब में

लाखों लगाव, एक चुराना निगाह का
लाखों बनाव, एक बिगड़ना 'अिताब में

वह नालः, दिल में ख़स के बराबर जगह न पाये
जिस नाले से शिगाफ़ पड़े आफ़ताब में

वह सेह्र, मुद्'आ तलबी में न काम आये
जिस सेह्र से सफ़ीनः रवाँ हो सराब में

ग़ालिब छुटी शराब, पर अब भी, कभी कभी
पीता हूँ रोज़-ए-अब्र-ओ-शब-ए-माहताब में

९९

क़ल्ल के लिये कर आज न ख़िस्सत शराब में
यह सू-ए-ज़न है साक़ि-ए-कौसर के बाब में

हैं आज क्यों ज़लील, कि कल तक न थी पसन्द
गुस्ताख़ि-ए-फ़रिश्तः हमारी जनाब में

जाँ क्यों निकलने लगती है तन से, दम-ए-समा'अ
गर वह सदा समाई है चँग-ओ-रबाब में

रौ में है रख़्श-ए-'उम्र, कहाँ, देखिये, थमे
ने हाथ बाग पर है, न पा है रिकाब में

उतना ही मुझको अपनी हक़ीक़त से बो'द है
जितना कि वह्म-ए-ग़ैर से हूँ पेच-ओ-ताब में

अस्ल-ए-शुहूद-ओ-शाहिद-ओ-मशहूद एक है
हैराँ हूँ, फिर मुशाहिदः है किस हिसाब में

है मुश्तमिल नुमूद-ए-सुवर पर वुजूद-ए-बह्र
याँ क्या धरा है क़तरः-ओ-मौज-ओ-हबाब में

शर्म इक अदा-ए-नाज़ है, अपने ही से सही
हैं कितने बे हिजाब, कि हैं यों हिजाब में

आराइश-ए-जमाल से फ़ारिग़ नहीं हनोज़
पेश-ए-नज़र है आइनः दाइम निक़ाब में

है ग़ैब-ए-ग़ैब, जिसको समझते हैं हम शुहूद
हैं ख़्वाब में हनोज़, जो जागे हैं ख़्वाब में

ग़ालिब, नदीम-ए-दोस्त से, आती है बू-ए-दोस्त
मशग़ूल-ए-हक़ हूँ, बन्दगि-ए-बू तुराब में

१००

हैराँ हूँ, दिल को रोऊँ, कि पीटूँ जिगर को मैं
मक़दूर हो, तो साथ रखूँ नौहःगर को मैं

छोड़ा न रश्क ने, कि तिरे घर का नाम लूँ
हर इक से पूछता हूँ, कि जाऊँ किधर को मैं

जाना पड़ा रक़ीब के दर पर, हज़ार बार
अय काश, जानता न तिरी रहगुज़र को मैं

है क्या, जो कस के बाँधिये, मेरी बला डरे
क्या जानता नहीं हूँ, तुम्हारी कमर को मैं

लो, वह भी कहते हैं कि यह बे नँग-ओ-नाम है
यह जानता अगर, तो लुटाता न घर को मैं

चलता हूँ थोड़ी दूर; हर इक तेज़ रौ के साथ
पहचानता नहीं हूँ अभी, राहबर को मैं

ख़्वाहिश को, अहमक़ों ने, परस्तिश दिया क़रार
क्या पूजता हूँ उस बुत-ए-बेदादगर को मैं

फ़िर बेख़ुदी में भूल गया, राह-ए-कू-ए-यार
जाता वगरनः एक दिन अपनी खबर को मैं

अपने प कर रहा हूँ क़ियास, अह्ल-ए-दह्र का
समझा हूँ दिल पिज़ीर, मता'-ए-हुनर को मैं

ग़ालिब, ख़ुदा करे कि सवार-ए-समन्द-ए-नाज़
देखूँ 'अली बहादुर-ए-'आली गुहर को मैं

१०१

ज़िक्र मेरा, बबदी भी, उसे मंज़ूर नहीं
ग़ैर की बात बिगड़ जाय, तो कुछ दूर नहीं

वा'दः-ए-सैर-ए-गुलिस्ताँ है, ख़ुशा तालें'-ए-शौक़
मुश़दः-ए-क़त्ल मुक़द्दर है, जो मज़कूर नहीं

शाहिद-ए-हस्ति-ए-मुत्लक़ की कमर है ‘आलम
लोग कहते हैं कि है, पर हमें मंज़ूर नहीं

क़तरः अपना भी हक़ीक़त में है दरिया, लेकिन
हमको तक़लीद-ए-तुनुक ज़रफ़ि-ए-मंसूर नहीं

हसरत, अय ज़ौक़-ए-ख़राबी, कि वह ताक़त न रही
‘अिश्क़-ए-पुर ‘अर्बदः की गौं तन-ए-रंजूर नहीं

मैं जो कहता हूँ, कि हम लेंगे क़यामत में तुम्हें
किस र‘अूनत से वह कहते हैं, कि हम हूर नहीं

ज़ुल्म कर, ज़ुल्म, अगर लुत्फ़ दरेग़ आता हो
तू तग़ाफ़ुल में किसी रँग से मा‘ज़ूर नहीं

साफ़ दुर्दी कश-ए-पैमानः-ए-जम हैं, हम लोग
वाय, वह बादः, कि अफ़शुरदः-ए-अँगूर नहीं

हूँ ज़हूरी के मुक़ाबिल में ख़िफ़ाई ग़ालिब
मेरे दा‘वे प यह हुज्जत है, कि मशहूर नहीं

नालः जुज़ हुस्न-ए-तलब, अय सितम इजाद, नहीं
है तक़ाज़ा-ए-जफ़ा, शिकवः-ए-बेदाद नहीं

'अिश्क़-ओ-मज़दूरि-ए-'अिश्रत गह-ए-ख़ुसरू क्या ख़ूब
हम को तसलीम निकुनामि-ए-फ़रहाद नहीं

कम नहीं वह भी ख़राबी में, प वुस'अत मा'लूम
दश्त में, है मुझे वह 'अैश, कि घर याद नहीं

अहल-ए-बीनिश को, है तूफ़ान-ए-हवादिस, मकतब
लतमः-ए-मौज, कम अज़ सेलि-ए-उस्ताद, नहीं

वाये महरूमि-ए-तसलीम-ओ-बदा हाल-ए-वफ़ा
जानता है, कि हमें ताक़त-ए-फ़रियाद नहीं

रँग-ए-तमकीन-ए-गुल-ओ-लालः परीशाँ क्यों है
गर चराग़ान-ए-सर-ए-रह गुज़र-ए-बाद नहीं

सबद-ए-गुल के तले बन्द करे है गुलचीं
मुश़्दः, अय मुर्ग़, कि गुलज़ार में सय्याद नहीं

नफ़ि से करती है इस्बात तराविश गोया
दी ही जा-ए-दहन उस को दम-ए-ईजाद, नहीं

कम नहीं, जल्वः गरी में, तिरे कूचे से बिहिश्त
यही नक़्शः है, वले इस क़दर आबाद नहीं

करते किस मुँह से हो, ग़ुर्बत की शिकायत, ग़ालिब
तुम को बेमेहरि-ए-यारान-ए-वतन याद नहीं

१०३

दोनों जहान दे के, वह समझे, यह ख़ुश रहा
याँ आपड़ी यह शर्म, कि तकरार क्या करें

थक थक के, हर मक़ाम प दो चार रह गये
तेरा पता न पायें, तो नाचार क्या करें

क्या शम्'अ के नहीं है हवा ख़्वाह अहल-ए-बज़्म
हो ग़म ही जाँ गुदाज़, तो ग़मख़्वार क्या करें

१०४

हो गई है ग़ैर की शीरीं बयानी, कारगर
'अिश्क़ का उसको गुमाँ हम बेज़बानों पर नहीं

१०५

क़यामत है, कि सुन लैला का दश्त-ए-क़ैस में आना
त'अज्जुब से वह बोला, यों भी होता है ज़माने में

दिल-ए-नाज़ुक प उस के रह्म आता है मुझे, ग़ालिब
न कर सर्गर्म उस काफ़िर को उल्फ़त आज़माने में

१०६

दिल लगाकर लग गया उनको भी तन्हा बैठना
बारे, अपनी बेकसी की हमने पाई दाद, याँ

हैं ज़वाल आमादः अज्ज़ा आफ़रीनिश के तमाम
मेह्र-ए-गर्दूं है चराग़-ए-रह्गुज़ार-ए-बाद, याँ

१०७

यह हम जो हिज्र में, दीवार-ओ-दर को देखते हैं
कभी सबा को, कभी नामःबर को देखते हैं

वह आयें घर में हमारे, ख़ुदा की क़ुदरत है
कभी हम उनको, कभी अपने घर को देखते हैं

नज़र लगे न कहीं, उसके दस्त-ओ-बाज़ू को
यह लोग क्यों मिरे ज़ख़्म-ए-जिगर को देखते हैं

तिरे जवाहिर-ए-तर्फ़-ए-कुलह को क्या देखें
हम औजे ताले'-ए-ला'ल-ओ-गुहर को देखते हैं

नहीं, कि मुझको क़ियामत का ए'तिक़ाद नहीं
शब-ए-फ़िराक़ से, रोज़-ए-जज़ा, ज़ियाद नहीं

कोई कहे, कि शब-ए-मह में क्या बुराई है
बला से, आज अगर दिन को अब्र-ओ-बाद नहीं

जो आऊँ सामने उनके, तो मरहबा न कहें
जो जाऊँ वाँ से कहीं को, तो ख़ैरबाद नहीं

कभी जो याद भी आता हूँ मैं, तो कहते हैं
कि, आज बज़्म में कुछ फ़ितनः-ओ-फ़साद नहीं

'अलावः 'ईद के मिलती है, और दिन भी, शराब
गदा-ए-कूचः-ए-मैख़ानः नामुराद नहीं

जहाँ में हो ग़म-ओ-शादी बहम, हमें क्या काम
दिया है हम को ख़ुदा ने वह दिल, कि शाद नहीं

तुम उन के वा'दे का ज़िक्र उन से क्यों करो, ग़ालिब
यह क्या, कि तुम कहो, और वह कहें, कि याद नहीं

तेरे तौसन को सबा बाँधते हैं
हम भी मज़मूँ की हवा बाँधते हैं

आह का किसने असर देखा है
हम भी इक अपनी हवा बाँधते हैं

तेरी फ़ुर्सत के मुक़ाबिल, अय 'अुम्र
बर्क़ को पा ब हिना बाँधते हैं

क़ैद-ए-हस्ती से रिहाई, मा'लूम
अश्क को बे सर-ओ-पा बाँधते हैं

नश्शः-ए-रँग से, है वाशुद-ए-गुल
मस्त कब बन्द-ए-क़िबा बाँधते हैं

ग़लतीहा-ए-मज़ामीं मत पूछ
लोग नाले को रसा बाँधते हैं

अह्ल-ए-तद्बीर की वामान्दगियाँ
आबलों पर भी हिना बाँधते हैं

सादः पुरकार हैं ख़ूबाँ, ग़ालिब
हम से पैमान-ए-वफ़ा बाँधते हैं

करते हो मुझको मन'-ए-क़दम बोस किस लिये
क्या आसमान के भी बराबर नहीं हूँ मैं

ग़ालिब, वज़ीफ़: ख़्वार हो, दो शाह को दु'आ
वह दिन गये कि कहते थे, नौकर नहीं हूँ मैं

११२

सब कहाँ, कुछ लालः-ओ-गुल में नुमायाँ हो गईं
ख़ाक में क्या सूरतें होंगी, कि पिन्हाँ हो गईं

याद थीं, हम को भी, रँगारँग बज़्म आराइयाँ
लेकिन अब नक़्श-ओ-निगार-ए-ताक़-ए-निसियाँ हो गईं

थीं बनातुन्ना'श-ए-गर्दूं, दिन को पर्दे में निहाँ
शब को उनके जी में क्या आई, कि 'उरियाँ हो गईं

क़ैद में या'क़ूब ने ली, गो, न यूसुफ़ की ख़बर
लेकिन आँखें रौज़न-ए-दीवार-ए-ज़िन्दाँ हो गईं

सब रक़ीबों से हों नाख़ुश, पर ज़नान-ए-मिस्र से
है ज़ुलैख़ा ख़ुश, कि महव-ए-माह-ए-कन'आँ हो गईं

जू-ए-ख़ूँ आँखों से बहने दो, कि है शाम-ए-फ़िराक़
मैं यह समझूँगा, कि शम'एँ दो फ़ुरोज़ाँ हो गईं

इन परीज़ादों से लेंगे ख़ुल्द में हम इन्तिक़ाम
क़ुदरत-ए-हक़ से, यही हूरें अगर वाँ हो गईं

नीन्द उसकी है, दिमाग़ उसका है, रातें उसकी हैं
तेरी ज़ुल्फ़ें, जिस के बाज़ू पर, परीशाँ हो गईं

मैं चमन में क्या गया, गोया दबिस्ताँ खुल गया
बुलबुलें सुन कर मिरे नाले, ग़ज़लख़्वाँ हो गईं

वह निगाहें क्यों हुई जाती हैं, यारब, दिल के पार
जो मिरी कोताहि-ए-क़िस्मत से मिशगाँ हो गईं

बसकि रोका मैं ने, और सीने में उभरीं पै ब पै
मेरी आहें बख़ियः-ए-चाक-ए-गरीबाँ हो गईं

वाँ गया भी मैं, तो उनकी गालियों का क्या जवाब
याद थीं जितनी दु'आयें, सर्फ़-ए-दरबाँ हो गईं

जाँ फ़िज़ा है बादः, जिसके हाथ में जाम आ गया
सब लकीरें हाथ की, गोया रग-ए-जाँ हो गईं

हम मुव्वहिद हैं, हमारा केश है, तर्क-ए-रुसूम
मिल्लतें जब मिट गईं, अज्ज़ा-ए-ईमाँ हो गईं

रँज से ख़ूगर हुआ इंसाँ, तो मिट जाता है रँज
मुश्किलें मुझ पर पड़ीं इतनी, कि आसाँ हो गईं

यों ही गर रोता रहा ग़ालिब, तो अय अह्ल-ए-जहाँ
देखना इन बस्तियों को तुम, कि वीराँ हो गईं

११३

दीवानगी से, दोश प ज़ुन्नार भी नहीं
या'नी हमारी जैब में इक तार भी नहीं

दिल को नियाज़-ए-हसरत-ए-दीदार कर चुके
देखा तो हम में ताक़त-ए-दीदार भी नहीं

मिलना तिरा अगर नहीं आसाँ, तो सह्ल है
दुश्वार तो यही है, कि दुश्वार भी नहीं

बे 'अिश्क़ 'अुम्र कट नहीं सकती है, और याँ
ताक़त ब क़द्र-ए-लज़्ज़त-ए-आज़ार भी नहीं

शोरीदगी के हाथ से, है सर वबाल-ए-दोश
सहरा में, अय ख़ुदा, कोई दीवार भी नहीं

गुँजाइश-ए-'अदावत-ए-अग़यार इक तरफ़
याँ दिल में, ज़ो'फ़ से, हवस-ए-यार भी नहीं

डर नाल:हा-ए-ज़ार से मेरे, ख़ुदा को मान
आख़िर नवा-ए-मुर्ग़-ए-गिरफ़्तार भी नहीं

दिल में है यार की सफ़-ए-मिश़गाँ से रूकशी
हालाँकि ताक़त-ए-ख़लिश-ए-ख़ार भी नहीं

इस सादगी प कौन न मर जाये, अय ख़ुदा
लड़ते हैं और हाथ में तलवार भी नहीं

देखा असद को ख़ल्वत-ओ-जल्वत में बारहा
दीवानः गर नहीं है, तो हुशियार भी नहीं

११४

नहीं है ज़ख़्म कोई बख़िये के दरख़ुर, मिरे तन में
हुआ है तार-ए-अश्क-ए-यास रिश्तः चश्म-ए-सूज़न में

हुई है माने'-ए-ज़ौक़-ए-तमाशा, ख्वानः वीरानी
कफ-ए-सैलाब बाक़ी है, बरँग-ए-पँबः रौज़न में

वदी'अत ख़ानः-ए-बेदाद-ए-काविशहाः-ए-मिश़गाँ हूँ
नगीन-ए-नाम-ए-शाहिद है मिरे हर क़तरः खूँ तन में

बयाँ किससे हो, ज़ुल्मत गुस्तरी मेरे शबिस्ताँ की
शब-ए-मह हो, जो रख दें पँबः दीवारों के रौज़न में

निकोहिश माने'-ए-बेरब्ति-ए-शोर-ए-जुनूँ आई
हुआ है ख़न्दः-ए-अहबाब बख़ियः जैब-ओ-दामन में

हुये उस मेह्र वश के जल्वः-ए-तिम्साल के आगे
पर अफ़शाँ जौह्र आईने में, मिस्ल-ए-ज़र्रः रौज़न में

न जानूँ नेक हूँ या बद हूँ, पर सोहबत मुख़ालिफ़ है
जो गुल हूँ तो हूँ गुलख़न में, जो ख़स हूँ तो हूँ गुलशन में

हज़ारों दिल दिये, जोश-ए-जुनून-ए-'अिश्क़ ने मुझको
सियह होकर सुवैदा हो गया हर क़तरः खूँ तन में

असद, जिन्दानि-ए-तासीर-ए-उल्फ़तहा-ए-ख़ूबाँ हूँ
ख़म-ए-दस्त-ए-नवाज़िश हो गया है तौक़ गर्दन में

११५

मज़े जहान के अपनी नज़र में ख़ाक नहीं
सिवाये ख़ून-ए-जिगर, सो जिगर में ख़ाक नहीं

मगर ग़ुबार हुये पर, हवा उड़ा ले जाये
वगरनः ताब-ओ-तवाँ बाल-ओ-पर में ख़ाक नहीं

यह किस बिहिश्त शमाइल की आमद आमद है
कि ग़ैर-ए-जल्वः-ए-गुल रहगुज़र में ख़ाक नहीं

भला उसे न सही, कुछ मुझी को रह्म आता
असर मिरे नफ़स-ए-बेअसर में ख़ाक नहीं

ख़याल-ए-जल्वः-ए-गुल से ख़राब हैं मैकश
शराब ख़ाने के दीवार-ओ-दर में ख़ाक नहीं

हुआ हूँ 'अिश्क़ की ग़ारतगरी से शर्मिन्दः
सिवाये हसरत-ए-ता'मीर घर में ख़ाक नहीं

हमारे शे'र हैं अब सिर्फ़ दिल्लगी के, असद
खुला, कि फायदः अर्ज़-ए-हुनर में खाक नहीं

११६

दिल ही तो है, न सँग-ओ-ख़िश्त, दर्द से भर न आये क्यों
रोयेंगे हम हज़ार बार, कोई हमें सताये क्यों

दैर नहीं, हरम नहीं, दर नहीं, आस्ताँ नहीं
बैठे हैं रहगुज़र प हम, कोई हमें उठाये क्यों

जब वह जमाल-ए-दिल फ़रोज़, सूरत-ए-मेह्र-ए-नीमरोज़
आप ही हो नजारः सोज़, पर्दे में मुँह छुपाये क्यों

दश्नः-ए-ग़मज़ः जाँ सिताँ, नावक-ए-नाज़ बे पनाह
तेरा ही 'अक्स-ए-रुख़ सही, सामने तेरे आये क्यों

क़ैद-ए-हयात-ओ-बन्द-ए-ग़म, अस्ल में दोनों एक हैं
मौत से पहले, आदमी ग़म से नजात पाये क्यों

हुस्न और उस प हुस्न-ए-ज़न, रह गई बुल्हवस की शर्म
अपने प ए'तिमाद है, ग़ैर को आज़माये क्यों

वाँ वह ग़ुरूर-ए-'अिज़्ज़-ओ-नाज़, याँ यह हिजाब-ए-पास-ए-वज़्'अ
राह में हम मिलें कहाँ, बज़्म में वह बुलाये क्यों

हाँ वह नहीं ख़ुदा परस्त, जाओ वह बेवफ़ा सही
जिसको हो दीन-ओ-दिल 'अज़ीज़, उसकी गली में जाये क्यों

ग़ालिब-ए-ख़स्तः के बिग़ैर, कौन से काम बन्द हैं
रोइये ज़ार ज़ार क्या, कीजिये हाय हाय क्यों

११७

ग़ुंचः-ए-नाशिगुफ़्तः को दूर से मत दिखा, कि यों
बोसे को पूछता हूँ मैं, मुँह से मुझे बता, कि यों

पुरसिश-ए-तर्ज़-ए-दिलबरी, कीजिये क्या, कि बिन कहे
उसके हर इक इशारे से निकले है यह अदा, कि यों

रात के वक़्त मै पिये, साथ रक़ीब को लिये
आये वह याँ ख़ुदा करे, पर न करे ख़ुदा, कि यों

ग़ैर से रात क्या बनी, यह जो कहा, तो देखिये
सामने आन बैठना, और यह देखना कि यों

बज़्म में उसके रूबरू, क्यों न ख़मोश बैठिये
उसकी तो ख़ामुशी में भी, है यही मुद्द'आ कि यों

मैंने कहा कि, बज़्म-ए-नाज़ चाहिये ग़ैर से, तिही
सुन के सितम ज़रीफ़ ने मुझको उठा दिया, कि यों

मुझसे कहा जो यार ने, जाते हैं होश किस तरह
देख के मेरी बेख़ुदी, चलने लगी हवा, कि यों

कब मुझे कू-ए-यार, में रहने की वज़्'अ याद थी
आइनःदार बन गई, हैरत-ए-नक़्श-ए-पा, कि यों

गर तिरे दिल में होखयाल, वस्ल में शौक़ का ज़वाल
मौज मुहीत-ए-आब में, मारे है दस्त-ओ-पा, कि यों

जो यह कहे, कि रेख़्तः क्योंकि हो रश्क-ए-फ़ारसी
गुफ्तः-ए-ग़ालिब एक बार पढ़के उसे सुना, कि यों

११८

हसद से दिल अगर अफ़सुर्दः है, गर्म-ए-तमाशा हो
कि चश्म-ए-तँग, शायद, कसरत-ए-नज़्ज़ारः से वा हो

बक़द्र-ए-हसरत-ए-दिल, चाहिये ज़ौक़-ए-म'आसी भी
भरूँ यक गोशः-ए-दामन, गर आब-ए-हफ़्त दरिया हो

अगर वह सर्व क़द, गर्म-ए-ख़िराम-ए-नाज़ आ जावे
कफ़-ए-हर ख़ाक-ए-गुलशन शक्ल-ए-क़ुमरी नालः फ़र्सा हो

११९

का'बे में जारहा, तो न दो ता'नः, क्या कहीं
भूला हूँ हक़्क़-ए-सोहबत-ए-अह्ल-ए-कुनिश्त को

ता'अत में ता, रहे न मै-ओ-वाँगबीं की लाग
दोज़ख़ में डाल दो, कोई लेकर बिहिश्त को

हूँ मुंहरिफ़ न क्यों, रह-ओ-रस्म-ए-सवाब से
टेढ़ा लगा है क़त, क़लम-ए-सरनविश्त को

ग़ालिब, कुछ अपनी स'यि से लहना नहीं मुझे
ख़रमन जले, अगर न मलख़ खाये किश्त को

१२०

वारस्तः उससे हैं, कि महब्बत ही क्यों न हो
कीजे हमारे साथ, 'अदावत ही क्यों न हो

छोड़ा न मुझमें ज़ो'फ़ ने रँग इख़्तिलात का
है दिल प बार, नक़्श-ए-महब्बत ही क्यों न हो

है मुझको तुझसे तज़किरः-ए-ग़ैर का गिला
हरचन्द बरसबील-ए-शिकायत ही क्यों न हो

पैदा हुई है, कहते हैं, हर दर्द की दवा
यों हो, तो चारः-ए-ग़म-ए-उल्फ़त ही क्यों न हो

डाला न बेकसी ने किसी से मु'आमला
अपने से खेंचता हूँ, ख़जालत ही क्यों न हो

है आदमी बजाये ख़ुद, इक महशर-ए-ख़याल
हम अंजुमन समझते हैं, ख़ल्वत ही क्यों न हो

हँगामः-ए-ज़बूनि-ए-हिम्मत है, इन्फ़ि'आल
हासिल न कीजे दह्र से, 'अिब्रत ही क्यों न हो

वारस्तगी बहानः-ए-बेगानगी नहीं
अपने से कर, न ग़ैर से, वहशत ही क्यों न हो

मिटता है फ़ौत-ए-फ़ुर्सत-ए-हस्ती का ग़म कोई
अुम्र-ए-'अज़ीज़ सर्फ़-ए-'अिबादत ही क्यों न हो

उस फ़ितनः ख़ू के दर से अब उठते नहीं, असद
इसमें हमारे सर प क़यामत ही क्यों न हो

क़फ़स में हूँ, गर अच्छा भी न जानें मेरे शेवन को
मिरा होना बुरा क्या है, नवा सँजान-ए-गुलशन को

नहीं गर हमदमी आसाँ, न हो यह रश्क क्या कम है
न दी होती, ख़ुदाया, आरज़ु-ए-दोस्त दुश्मन को

न निकला आँख से तेरी इक आँसू, उस जराहत पर
किया सीने में जिसने ख़ूँचकाँ, मिश़गान-ए-सूज़न को

ख़ुदा शरमाये हाथों को, कि रखते हैं कशाकश में
कभी मेरे गरीबाँ को, कभी जानाँ के दामन को

अभी हम क़त्लगह का देखना आसाँ समझते हैं
नहीं देखा शनावर जू-ए-ख़ूँ में तेरे तौसन को

हुआ चर्चा जो मेरे पाँव की जंजीर बनने का
किया बेताब काँ में, जुँबिश-ए-जौहर ने आहन को

ख़ुशी क्या, खेत पर मेरे, अगर सौ बार अब्र आवे
समझता हूँ, कि ढूण्डे है अभी से बर्क़ ख़िरमन को

वफ़ादारी, बशर्त-ए-उस्तुवारी, अस्ल-ए-ईमाँ है
मरे बुतख़ाने में, तो का'बे में गाड़ो बरहमन को

शहादत थी मिरी क़िस्मत में, जो दी थी यह ख़ू मुझको
जहाँ तलवार को देखा, झुका देता था गर्दन को

न लुटता दिन को, तो कब रात को यों बेख़बर सोता
रहा खटका न चोरी का, दु'आ देता हूँ रहज़न को

सुख़न क्या कह नहीं सकते, कि जोया हूँ जवाहिर के
जिगर क्या हम नहीं रखते, कि खोदें जाके मा'दन को

मिरे शाह-ए-सुलेमाँ जाह से निस्बत नहीं, ग़ालिब
फ़रीदून-ओ-जम-ओ-कैख़ुसरु-ओ-दाराब-ओ-बहमन को

१२२

धोता हूँ जब मैं पीने को, उस सीमतन के पाँव
रखता है, ज़िद से, खेंच के बाहर लगन के पाँव

दी सादगी से जान, पड़ूँ कोहकन के पाँव
हैहात, क्यों न टूट गये, पीरज़न के पाँव

भागे थे हम बहुत, सो उसी की सज़ा है यह
होकर असीर दाबते हैं, राहज़न के पाँव

मरहम की जुस्तुजू में, फिरा हूँ जो दूर दूर
तन से सिवा फिगार हैं, इस खस्तःतन के पाँव

अल्लह रे जौक़-ए-दश्त नवर्दी, कि बा'द-ए-मर्ग
हिलते हैं ख़ुद बख़ुद मिरे, अन्दर कफ़न के पाँव

है जोश-ए-गुल बहार में याँ तक, कि हर तरफ़
उड़ते हुये उलझते हैं, मुर्ग़-ए-चमन के पाँव

शब को किसी के ख़्वाब में आया न हो कहीं
दुखते हैं आज उस बुत-ए-नाज़ुक बदन के पाँव

ग़ालिब, मिरे क्लाम में क्योंकर मज़ा न हो
पीता हूँ धोके ख़ुसरू-ए-शीरीं सुखन के पाँव

१२३

वाँ उसको हौल-ए-दिल है, तो याँ मैं हूँ शर्मसार
या'नी यह मेरी आह की तासीर से न हो

अपने को देखता नहीं, ज़ौक़-ए-सितम तो देख
आईनः ताकि दीदः-ए-नख़्चीर से न हो

१२४

वाँ पहुँचकर जो ग़श आता पै-ए-हम है हम को
सदरह आहँग-ए-ज़मीं बोस-ए-क़दम है हम को

दिल को मैं, और मुझे दिल, महव-ए-वफ़ा रखता है
किस क़दर ज़ौक़-ए-गिरफ़्तारि-ए-हम है हम को

ज़ो'फ़ से, नक़्श-ए-पै-ए-मोर, है तौक़-ए-गर्दन
तेरे कूचे से, कहाँ ताक़त-ए-रम है हम को

जान कर कीजे तग़ाफ़ुल, कि कुछ उम्मीद भी हो
यह निगाह-ए-ग़लत अन्दाज़ तो सम है हम को

रश्क-ए-हमतरहि-ओ-दर्द-ए-असर-ए-बाँग-ए-हज़ीं
नालः-ए-मुर्ग़-ए-सहर, तेग़-ए-दुदम है हम को

सर उड़ाने के जो वा'दे को मुकर्रर चाहा
हँस के बोले कि, तिरे सर की क़सम है हम को

दिल के ख़ूँ करने की क्या वज्ह्, वलेकिन नाचार
पास-ए-बेरौनक़ि-ए-दीदः अहम है हम को

तुम वह नाज़ुक, कि ख़मोशी को फ़ुग़ाँ कहते हो
हम वह 'आजिज़, कि तग़ाफ़ुल भी सितम है हम को

क़त'अः

लखनऊ आने का बा'अिस नहीं खुलता, या'नी
हवस-ए-सैर-ओ-तमाशा, सो वह कम है हम को

मक़त'-ए-सिलसिलः-ए-शौक़ नहीं है यह शह्र
'अज़्म-ए-सैर-ए-नजफ़-ओ-तौफ़-ए-हरम है हम को

लिये जाती है कहीं एक तवक़्क़ो'अ, ग़ालिब
जादः-ए-रह कशिश-ए-काफ़-ए-करम है हम को

१२५

तुम जानो, तुम को ग़ैर से जो रस्म-ओ-राह हो
मुझको भी पूछते रहो, तो क्या गुनाह हो

बचते नहीं मुआख़ज़ः-ए-रोज़-ए-हश्र से
क़ातिल अगर रक़ीब है, तो तुम गवाह हो

क्या वह भी बेगुनह कुश-ओ-हक़ ना शनास हैं
माना कि तुम बशर नहीं, ख़ुर्शीद-ओ-माह हो

उभरा हुआ निक़ाब में है उनके, एक तार
मरता हूँ मैं, कि यह न किसी की निगाह हो

जब मैकदः छुटा, तो फिर अब क्या जगह की क़ैद
मस्जिद हो, मद्रसः हो, कोई ख़ानक़ाह हो

सुनते हैं जो बिहिश्त की ता'रीफ़, सब दुरुस्त
लेकिन ख़ुदा करे, वह तिरी जल्वःगाह हो

ग़ालिब भी गर न हो, तो कुछ ऐसा ज़रर नहीं
दुनिया हो, यारब, और मिरा बादशाह हो

१२६

गई वह बात, कि हो गुफ़्तुगू तो क्योंकर हो
कहे से कुछ न हुआ, फिर कहो, तो क्योंकर हो

हमारे ज़ेह्न में, इस फ़िक्र का है नाम है विसाल
कि गर न हो, तो कहाँ जायें, हो, तो क्योंकर हो

अदब है और यही कशमकश, तो क्या कीजे
हया है और यही गोमगो, तो क्योंकर हो

तुम्हीं कहो, कि गुज़ारा सनम परस्तों का
बुतों की हो अगर ऐसी ही ख़ू, तो क्योंकर हो

उलझते हो तुम, अगर देखते हो आईनः
जो तुमसे शह्र में हों एक दो, तो क्योंकर हो

जिसे नसीब हो, रोज़-ए-सियाह मेरा सा
वह शख़्स दिन न कहे रात को, तो क्योंकर हो

हमें फिर उनसे उमीद, और उन्हें हमारी क़द्र
हमारी बात ही पूछें न वो, तो क्योंकर हो

ग़लत न था, हमें खत पर, गुमाँ तसल्ली का
न माने दीदः-ए-दीदार जू, तो क्योंकर हो

बताओ उस मिश़ः को देखकर, हो मुझको क़रार
यह नेश हो रग-ए-जाँ में फ़रो, तो क्योंकर हो

मुझे जुनूँ नहीं, ग़ालिब, वले बक़ौल-ए-हुज़ूर
फ़िराक़-ए-यार में तस्कीन हो, तो क्योंकर हो

१२७

किसी को देके दिल कोई नवा सँज-ए-फ़ुग़ाँ क्यों हो
न हो जब दिल ही सीने में, तो फिर मुँह में ज़बाँ क्यों हो

वह अपनी ख़ू न छोड़ेंगे, हम अपनी वज़्'अ क्यों छोड़ें
सुबुक सर बन के क्या पूछें, कि हमसे सरगिराँ क्यों हो

किया ग़मख़्वार ने रुस्वा; लगे आग इस महब्बत को
न लावे ताब जो ग़म की, वह मेरा राज़दाँ क्यों हो

वफ़ा कैसी, कहाँ का 'अिश्क़, जब सर फोड़ना ठहरा
तो फिर, अय सँग दिल, तेरा ही सँग-ए-आस्ताँ क्यों हो

क़फ़स में, मुझसे रूदाद ए-चमन कहते, न डर, हमदम
गिरी है जिस प कल बिजली, वह मेरा आशियाँ क्यों हो

यह कह सक्ते हो, हम दिल में नहीं हैं, पर यह बतलाओ
कि जब दिल में तुम्हीं तुम हो, तो आँखों से निहाँ क्यों हो

ग़लत है जज़्ब-ए-दिल का शिक्वः, देखो जुर्म किस का है
न खेंचो गर तुम अपने को, कशाकश दरमियाँ क्यों हो

यह फ़ितनः, आदमी की ख़ानःवीरानी को क्या कम है
हुये तुम दोस्त जिसके, दुश्मन उसका आस्माँ क्यों हो

यही है आज़माना, तो सताना किस को कहते हैं
'अदू के हो लिये जब तुम, तो मेरा इम्तिहाँ क्यों हो

कहा तुमने कि, क्यों हो ग़ैर के मिलने में रुस्वाई
बजा कहते हो, सच कहते हो, फिर कहियो कि हाँ क्यों हो

निकाला चाहता है काम क्या ता'नों से तू, ग़ालिब
तिरे बेमेह्र कहने से, वह तुझ पर मेह्रबाँ क्यों हो

१२८

रहिये अब ऐसी जगह चलकर, जहाँ कोई न हो
हम सुखन कोई न हो और हम ज़बाँ कोई न हो

बेदर-ओ-दीवार सा इक घर बनाया चाहिये
कोई हमसायः न हो और पास्बाँ कोई न हो

पड़िये गर बीमार, तो कोई न हो तीमारदार
और अगर मर जाइये, तो नौहः ख़्वाँ कोई न हो

१२९

अज़ मेह्र ता ब ज़र्रः दिल-ओ-दिल है आइनः
तूती को शश जिहत से मुक़ाबिल है आइनः

१३०

है सब्ज़ः ज़ार हर दर-ओ-दीवार-ए-ग़मकदः
जिसकी बहार यह हो, फिर उसकी ख़ज़ाँ न पूछ

नाचार बेकसी की भी हसरत उठाइये
दुश्वारि-ए-रह-ओ-सितम-ए-हमरहाँ न पूछ

१३१

सद जल्वः रू ब रू है, जो मिश़गाँ उठाइये
ताक़त कहाँ, कि दीद का एहसाँ उठाइये

है सँग पर, बरात-ए-म'आश-ए-जुनून-ए-'अिश्क़
या'नी हनोज़ मिन्नत-ए-तिफ़्लाँ उठाइये

दीवार, बार-ए-मिन्नत-ए-मज़दूर से, है ख़म
अय ख़ानमाँ ख़राब, न एहसाँ उठाइये

या मेरे ज़ख़्म-ए-रश्क को रुस्वा न कीजिये
या पर्दः-ए-तबस्सुम-ए-पिन्हाँ उठाइये

१३२

मस्जिद के ज़ेर-ए-सायः, ख़राबात चाहिये
भौं पास आँख, क़िबलः-ए-हाजात चाहिये

'आशिक़ हुये हैं आप भी, इक और शख़्स पर
आख़िर सितम की कुछ तो मुकाफ़ात चाहिये

दे दाद, अय फ़लक, दिल-ए-हसरत परस्त की
हाँ कुछ न कुछ तलाफ़ि-ए-माफ़ात चाहिये

सीखे हैं महरुख़ों के लिये हम मुसव्विरी
तक़रीब कुछ तो बह्र-ए-मुलाक़ात चाहिये

मै से ग़रज़ नशात है किस रूसियाह को
इक गूनः बेख़ुदी मुझे दिन रात चाहिये

है रँग-ए-लालः-ओ-गुल-ओ-नसरीं, जुदा जुदा
हर रँग में बहार का इस्बात चाहिये

सर पा-ए-ख़ुम प चाहिये हँगाम-ए-बेख़ुदी
रू सू-ए-क़िब्ल: वक़्त-ए-मुनाजात चाहिये

या'नी ब हस्ब-ए-गर्दिश-ए-पैमान:-ए-सिफ़ात
आरिफ़ हमेश: मस्त-ए-मै-ए-ज़ात चाहिये

नश्व-ओ-नुमा है अस्ल से, ग़ालिब-फ़ुरू'अ को
ख़ामोशी ही से निक्ले है, जो बात चाहिये

१३३

बिसाते 'अिज्ज़ में था एक दिल, यक क़तर: ख़ूँ वह भी
सो रहता है, बअन्दाज़-ए-चकीदन सर निगूँ, वह भी

रहे उस शोख़ से आज़ुर्द: हम चन्दे, तकल्लुफ़ से
तकल्लुफ़ बरतरफ़, था एक अन्दाज़-ए-जुनूँ वह भी

ख़याल-ए-मर्ग, कब तस्कीं दिल-ए-आज़ुर्द: को बख़्शे
मिरे दाम-ए-तमन्ना में है इक सैद-ए-ज़ुबूँ, वह भी

न करता काश नाल:, मुझको क्या मा'लूम था, हमदम
कि होगा बाइस-ए-अफ़ज़ाइश-ए-दर्द-ए-दुरूँ वह भी

न इतना बुर्रिश-ए-तेग़-ए-जफ़ा पर नाज़ फ़रमाओ
मिरे दरिया-ए-बेताबी में है इक मौज-ए-ख़ूँ वह भी

मैं-ए-'अिश्रत की ख़्वाहिश, साक़ि-ए-गर्दूं से क्या कीजे
लिये बैठा है, इक दो चार जाम-ए-वाशगूँ वह भी

मिरे दिल में है, ग़ालिब, शौक़-ए-वस्ल-ओ-शिकव:-ए-हिजराँ
ख़ुदा वह दिन करे, जो उससे मैं यह भी कहूँ, वह भी

१३४

है बज़्म-ए-बुताँ में सुख़न आज़ुर्द: लबों से
तँग आये हैं हम, ऐसे ख़ुशामद तलबों से

है दौर-ए-क़दह, वजूह-ए-परीशानि-ए-सह्बा
यक बार लगा दो ख़ुम-ए-मै मेरे लबों से

रिन्दान-ए-दर-ए-मैकद:, गुस्ताख़ हैं, ज़ाहिद
ज़िन्हार न होना तरफ़, इन बेअदबों से

बेदाद-ए-वफ़ा देख, कि जाती रही आख़िर
हरचन्द मिरी जान को था रब्त लबों से

१३५

ता, हम को शिकायत की भी बाक़ी न रहे जा
सुन लेते हैं, गो ज़िक्र हमारा नहीं करते

ग़ालिब, तिरा अहवाल सुना देंगे हम उनको
वह सुन के बुला लें, यह इजारा नहीं करते

१३६

घर में था क्या, कि तिरा ग़म उसे ग़ारत करता
वह जो रखते थे हम इक हसरत-ए-ता'मीर, सो है

१३७

ग़म-ए-दुनिया से, गर पाई भी फ़ुर्सत, सर उठाने की
फ़लक का देखना, तक़रीब तेरे याद आने की

खुलेगा किस तरह मज़मूँ मिरे मकतूब का, यारब
क़सम खाई है उस काफ़िर ने, काग़ज़ के जलाने की

लिपटना परनियाँ में शो'लः-ए-आतश का आसाँ है
वले मुश्किल है हिक्मत, दिल में सोज़-ए-ग़म छुपाने की

उन्हें मंज़ूर अपने ज़ख़्मियों का देख आना था
उठे थे सैर-ए-गुल को, देखना शोख़ी बहाने की

हमारी सादगी थी, इल्तिफ़ात-ए-नाज़ पर मरना
तिरा आना न था, ज़ालिम, मगर तम्हीद जाने की

लकद कोब-ए-हवादिस का तहम्मुल कर नहीं सकती
मिरी ताक़त, कि ज़ामिन थी बुतों के नाज़ उठाने की

कहूँ क्या ख़ूबि-ए-औज़ा'-ए- इबना-ए-ज़माँ, ग़ालिब
बदी की उसने, जिस से हमने की थी बारहा नेकी

१३८

हासिल से हाथ धो बैठ, अय आरज़ू ख़िरामी
दिल जोश-ए-गिरियः में है डूबी हुई असामी

उस शम्'अ की तरह से, जिसको कोई बुझा दे
मैं भी जले हुओं में, हूँ दाग़-ए-नातमामी

१३९

क्या तँग हम सितमज़दगाँ का जहान है
जिसमें कि एक बैज़ः-ए-मोर आसमान है

है कायनात को हरकत तेरे ज़ौक़ से
परतौ से आफ़ताब के, ज़र्रे में जान है

हालआँकि है यह सेलि-ए-ख़ारा से लालः रँग
ग़ाफ़िल को मेरे शीशे प मै का गुमान है

की उसने गर्म सीनः-ए-अहल-ए-हवस में जा
आवे न क्यों पसन्द, कि ठण्डा मकान है

क्या ख़ूब, तुमने ग़ैर को बोसः नहीं दिया
बस चुप रहो, हमारे भी मुँह में ज़बान है

बैठा है जो कि सायः-ए-दीवार-ए-यार में
फ़रमाँरवा -ए- किश्वर -ए- हिन्दोस्तान है

हस्ती का ए'तिबार भी ग़म ने मिटा दिया
किससे कहूँ कि दाग़-ए-जिगर का निशान है

है बारे ए'तिमाद-ए-वफ़ादारी इस क़दर
ग़ालिब, हम इसमें ख़ुश हैं, कि नामेह्रबान है

१४०

दर्द से मेरे है तुझको बेक़रारी हाय हाय
क्या हुई ज़ालिम तिरी ग़फ़्लत शि'आरी हाय हाय

तेरे दिल में गर, न था आशोब-ए-ग़म का हौसलः
तूने फिर क्यों की थी मेरी ग़मगुसारी हाय हाय

क्यों मिरी ग़मख़्वारगी का तुझको आया था ख़याल
दुश्मनी अपनी थी मेरी दोस्तदारी हाय हाय

'अुम्र भर का तूने पैमान-ए-वफ़ा बाँधा तो क्या
'अुम्र को भी तो नहीं है पायदारी हाय हाय

ज़ह्र लगती है मुझे आब-ओ-हवा-ए-ज़िन्दगी
या'नी तुझसे थी उसे नासाज़गारी हाय हाय

गुलफ़िशानीहा-ए-नाज़-ए-जल्वः को क्या हो गया
ख़ाक पर होती है तेरी लालःकारी हाय हाय

शर्म-ए-रुस्वाई से, जा छुपना निक़ाब-ए-ख़ाक में
ख़त्म है उल्फ़त की तुझपर पर्दःदारी हाय हाय

ख़ाक में नामूस-ए-पैमान-ए-महब्बत मिल गई
उठ गई दुनिया से राह-ओ-रस्म-ए-यारी हाय हाय

हाथ ही तेग़ आज़्मा का काम से जाता रहा
दिल प इक लगने न पाया ज़ख़्म-ए-कारी हाय हाय

किस तरह काटे कोई, शबहा-ए-तार-ए-बर्शकाल
है नज़र ख़ू करदः-ए-अख़्तर शुमारी हाय हाय

गोश मह्जूर-ए-पयाम-ओ-चश्म महरूम-ए-जमाल
एक दिल, तिसपर यह नाउम्मीदवारी हाय हाय

'अिश्क़ ने पकड़ा न था, ग़ालिब, अभी वह्शत का रँग
रह गया, था दिल में जो कुछ ज़ौक़-ए-ख़्वारी हाय हाय

१४१

सर गश्तगी में, 'आलम-ए-हस्ती से यास है
तस्कीं को दे नवेद, कि मरने की आस है

लेता नहीं मिरे दिल-ए-आवारः की ख़बर
अबतक वह जानता है, कि मेरे ही पास है

कीजे बयाँ सुरूर-ए-तब-ए-ग़म कहाँ तलक
हर मू मिरे बदन प ज़बान-ए-सिपास है

है वह ग़ुरूर-ए-हुस्न से बेगानः-ए-वफ़ा
हरचन्द उसके पास दिल-ए-हक़ शनास है

पी, जिस क़दर मिले, शब-ए-महताब में शराब
इस बलग़मी मिज़ाज को गर्मी ही रास है

हर इक मकान को है मकीं से शरफ़, असद
मजनूँ जो मर गया है, तो जँगल उदास है

१४२

गर ख़ामुशी से फ़ायदः, इख़फ़ा-ए-हाल है
ख़ुश हूँ, कि मेरी बात समझनी मुहाल है

किसको सुनाऊँ हस्रत-ए-इज़हार का गिला
दिल फ़र्द-ए-जम'-ओ-खर्च ज़बाँहा-ए-लाल है

किस पर्दे में है आइन:परदाज़, अय ख़ुदा
रहमत, कि 'उज़्रख्वाह लब-ए-बेसवाल है

है है, ख़ुदा न ख़्वास्त: वह और दुश्मनी
अय शौक़, मुनफ'इल, यह तुझे क्या ख़याल है

मिश्कीं लिबास-ए-का'ब:, 'अली के क़दम से जान
नाफ़-ए-ज़मीन है, न कि नाफ़-ए-ग़ज़ाल है

वहशत प मेरी 'अर्स:-ए-आफ़ाक़ तँग था
दरिया ज़मीन को 'अरक़-ए-इन्फ़ि'आल है

हस्ती के मत फ़रेब में आजाइयो, असद
'आलम तमाम हल्क़:-ए-दाम-ए-ख़याल है

१४३

तुम अपने शिकवे की बातें, न खोद खोद के पूछो
हज़र करो मिरे दिल से, कि इसमें आग दबी है

दिला, यह दर्द-ओ-अलम भी तो मुग़्तनम है, कि आख़िर
न गिरिय:-ए-सहरी है, न आह-ए-नीमशबी है

१४४

एक जा हर्फ़-ए-वफ़ा लिक्खा था, सो भी मिट गया
ज़ाहिरा काग़ज़ तिरे ख़त का ग़लत बरदार है

जी जले ज़ौक़-ए-फ़ना की नातमामी पर न क्यों
हम नहीं जलते, नफ़स हरचन्द आतशबार है

आग से, पानी में बुझते वक़्त, उठती है सदा
हर कोई दरमाँदगी में नाले से नाचार है

है वही बदमस्ति-ए-हर ज़र्रः का ख़ुद 'उज़्रख़्वाह
जिसके जल्वे से ज़मीं ता आसमाँ सरशार है

मुझसे मत कह, तू हमें कहता था अपनी ज़िन्दगी
ज़िन्दगी से भी मिरा जी इन दिनों बेज़ार है

आँख की तस्वीर सरनामे प खेंची है, कि ता
तुझ प खुल जावे, कि इसको हसरत-ए-दीदार है

१४५

पीनस में गुज़रते हैं जो कूचे से वह मेरे
कंधा भी कहारों को बदलने नहीं देते

१४६

मिरी हस्ती फ़ज़ा-ए-हैरत आबाद-ए-तमन्ना है
जिसे कहते हैं नालः वह इसी 'आलम का 'अन्क़ा है

ख़ज़ाँ क्या, फ़स्ल-ए-गुल कहते हैं किस को, कोई मौसम हो
वही हम हैं, क़फस है, और मातम बाल-ओ-पर का है

वफ़ा-ए-दिल्बराँ है इत्तिफ़ाक़ी, वर्नः, अय हम्दम
असर फ़रियाद-ए-दिल्हा-ए-हज़ीं का, किसने देखा है

न लाई शोख़ि-ए-अन्देशः ताब-ए-रँज-ए-नौमीदी
कफ़-ए-अफ़सोस मलना 'अह्द-ए-तजदीद-ए-तमन्ना है

१४७

रह्म कर ज़ालिम, कि क्या बूद-ए-चराग़-ए-कुश्तः है
नब्ज़-ए-बीमार-ए-वफ़ा, दूद-ए-चराग़-ए-कुश्तः है

दिल्लगी की आरज़ू, बेचैन रखती है हमें
वर्नः याँ बेरौनक़ी, सूद-ए-चराग़-ए-कुश्तः है

१४८

चश्म-ए-ख़ूबाँ ख़ामुशी में भी नवा पर्दाज़ है
सुर्मः, तू कहवे, कि दूद-ए-शो'लः-ए-आवाज़ है

पैकर-ए-'अुश्शाक़, साज़-ए-ताले'-ए-नासाज़ है
नालः गोया गर्दिश-ए-सय्यारः की आवाज़ है

दस्तगाह-ए-दीदः-ए-ख़ूँबार-ए-मजनूँ देखना
यक बयाबाँ जल्वः-ए-गुल फ़र्श-ए-पा अन्दाज़ है

१४९

'अिश्क़ मुझको नहीं, वहशत ही सही
मेरी वहशत, तिरी शोह्रत ही सही

क़त'अ कीजे न त'अल्लुक़ हम से
कुछ नहीं है, तो 'अदावत ही सही

मेरे होने में है क्या रुस्वाई
अय, वह मज्लिस नहीं, ख़ल्वत ही सही

हम भी दुश्मन तो नहीं हैं अपने
ग़ैर को तुझ से महब्बत ही सही

अपनी हस्ती ही से हो, जो कुछ हो
आगही गर नहीं ग़फ़लत ही सही

'अुम्र हरचन्द कि है बर्क़ ख़िराम
दिल के ख़ूँ करने की फ़ुर्सत ही सही

हम कोई तर्क-ए-वफ़ा करते हैं
न सही 'अिश्क़, मुसीबत ही सही

कुछ तो दे, अय फ़लक-ए-ना-इंसाफ़
आह-ओ-फ़र्याद की रुख़सत ही सही

हम भी तस्लीम की ख़ू डालेंगे
बेनियाज़ी तिरी 'आदत ही सही

यार से छेड़ चली जाये, असद
गर नहीं वस्ल, तो हसरत ही सही

१५०

है आर्मीदगी में निकोहिश बजा मुझे
सुबह-ए-वतन है ख़न्द:-ए-दन्दाँनुमा मुझे

ढूण्डे है उस मुग़न्नि-ए-आतश नफ़स को जी
जिसकी सदा हो जल्व:-ए-बर्क़-ए-फ़ना मुझे

मस्तानः तय करूँ हूँ रह-ए-वादि-ए-ख़याल
ता बाज़गश्त से न रहे मुद्द'आ मुझे

करता है बसकि बाग़ में तू बेहिजाबियाँ
आने लगी है नकहत-ए-गुल से हया मुझे

खुलता किसी प क्यों, मिरे दिल का मु'आमलः
शे'रों के इन्तिख़ाब ने रुस्वा किया मुझे

१५१

ज़िन्दगी अपनी जब इस शक्ल से गुज़री, ग़ालिब
हम भी क्या याद करेंगे, कि ख़ुदा रखते थे

१५२

उस बज़्म में, मुझे नहीं बनती हया किये
बैठा रहा, अगर्चेः इशारे हुआ किये

दिल ही तो है, सियासत-ए-दर्बां से डर गया
मैं, और जाऊँ दर से तिरे, बिन सदा किये

रखता फिरूँ हूँ, ख़िर्क़ः-ओ-सज्जादः रहन-ए-मै
मुद्दत हुई है, दा'वत-ए-आब-ओ-हवा किये

बेसर्फ़ः ही गुज़रती है, हो गर्चेः 'ग्रुम्र-ए-ख़िज़्र
हज़रत भी कल कहेंगे, कि हम क्या किया किये

मक़दूर हो तो खाक से पूछूँ कि, ग्रय लईम
तू ने वह गँजहा-ए-गिराँमायः क्या किये

किस रोज़ तुहमतें न तराशा किये 'ग्रदू
किस दिन हमारे सर प न ग्रारे चला किये

सोहबत में ग़ैर की, न पड़ी हो कहीं यह ख़ू
देने लगा है बोसः बिग़ैर इल्तिजा किये

ज़िद की है ग्रौर बात, मगर ख़ू बुरी नहीं
भूले से उसने सैकड़ों वा'दे वफा किये

ग़ालिब, तुम्हीं कहो, कि मिलेगा जवाब क्या
माना कि तुम कहा किये ग्रौर वह सुना किये

१५३

रफ़्तार-ए-'ग्रुम्र, क़त'-ए-रह-ए-इज़्तिराब है
इस साल के हिसाब को, बर्क़ ग्राफ़ताब है

मीना-ए-मै है सर्व, नशात-ए-बहार से
बाल-ए-तदर्व जल्वः-ए-मौज-ए-शराब है

ज़ख़्मी हुआ है पाश्नः पा-ए-सबात का
ने भागने की गौं, न इक़ामत की ताब है

जादाद-ए-बादः नोशि-ए-रिन्दाँ है शश जिहत
ग़ाफ़िल गुमाँ करे है, कि गेती खराब है

नज़्ज़ारः क्या हरीफ हो, उस बर्क़-ए-हुस्न का
जोश-ए-बहार, जल्वे को जिसके निकाब है

मैं नामुराद दिल की तसल्ली को क्या करूँ
माना, कि तेरे रुख से निगह कामयाब है

गुज़रा असद, मसर्रत-ए-पैग़ाम-ए-यार से
क़ासिद प मुझको रश्क-ए-सवाल-ओ-जवाब है

१५४

देखना क़िस्मत, कि आप अपने प रश्क आजाये है
मे उसे देखूँ, भला कब मुझसे देखा जाये है

हाथ धो दिल से, यही गर्मी गर अन्देशे में है
आबगीनः, तुन्दि-ए-सहबा से पिघला जाये है

ग़ैर को, यारब, वह क्योंकर मन'-ए-गुस्ताख़ी करे
गर हया भी उसको आती है, तो शर्मा जाये है

शौक़ को यह लत, कि हरदम नालः खेंचे जाइये
दिल की वह हालत, कि दम लेने से घबरा जाये है

दूर चश्म-ए-बद, तिरी बज़्म-ए-तरब से, वाह, वाह
नग़्मः हो जाता है, वाँ गर नालः मेरा जाये है

गरचेः है तर्ज़-ए-तग़ाफ़ुल, पर्दः दार-ए-राज़-ए-'अिश्क़,
पर हम ऐसे खोये जाते हैं, कि वह पा जाये है

उसकी बज़्म आराइयाँ सुनकर, दिल-ए-रंजूर, याँ
मिस्ल-ए-नक़्श-ए-मुद्द'आ-ए-ग़ैर बैठा जाये है

होके 'आशिक़, वह परीरुख़, और नाज़ुक बन गया
रँग खुलता जाये है, जितना कि उड़ता जाये है

नक़्श को उसके, मुसव्विर पर भी क्या क्या नाज़ हैं
खेंचता है जिस क़दर, उतना ही खिंचता जाये है

सायः मेरा, मुझसे मिस्ल-ए-दूद भागे है, असद
पास मुझ आतश बजाँ के, किससे ठहरा जाये है

गर्म-ए-फ़रियद रखा, शक्ल-ए-निहाली ने मुझे
तब अमाँ हिज्र में दी, बर्द-ए-लियाली ने मुझे

निस्यः-ओ-नक़्द-ए-दो 'आलम की हक़ीक़त मा'लूम
ले लिया मुझ से, मिरी हिम्मत-ए-'आली ने मुझे

कस्रत आराइ-ए-वहदत, है परस्तारि-ए-वह्म
कर दिया काफ़िर, इन असनाम-ए-ख़याली ने मुझे

हवस-ए-गुल का तसव्वुर में भी खटका न रहा
'अजब आराम दिया, बेपर-ओ-बाली ने मुझे

१५६

कार्गाह-ए-हस्ती में, लालः दाग़ सामाँ है
बर्क़-ए-खर्मन-ए-राहत, ख़ून-ए-गर्म-ए-देह्क़ाँ है

ग़ुँचः ता शिगुफ़्तनहा, बर्ग-ए-'आफ़ियत मा'लूम
बावुजूद-ए-दिलजम'ई, ख़्वाब-ए-गुल परीशाँ है

हम से रँज-ए-बेताबी किस तरह उठाया जाय
दाग़ पुश्त-ए-दस्त-ए-'अिज्ज़, शो'लः ख़स ब दन्दाँ है

१५७

उग रहा है दर-ओ-दीवार से सब्ज़ः, ग़ालिब
हम बयाबाँ में हैं और घर में बहार आई है

सादगी पर उसकी, मरजाने की हसरत, दिल में है
बस नहीं चलता, कि फिर ख़ंजर कफ-ए-क़ातिल में है

देखना तक़रीर की लज़्ज़त, कि जो उसने कहा
मैने यह जाना, कि गोया यह भी मेरे दिल में है

गरचे: है किस किस बुराई से, वले बा ईं हम:
जिक्र मेरा, मुझसे बेहतर है, कि उस महफ़िल में है

बस, हुजूम-ए-ना उमीदी, ख़ाक में मिल जायगी
यह जो इक लज़्ज़त हमारी स'अ्रि-ए-बे हासिल में है

रँज-ए-रह क्यों खेंचिये, वामान्दगी को 'अ्रिश्क़ है
उठ नहीं सकता, हमारा जो क़दम मंज़िल में है

जल्व: ज़ार-ए-आतश-ए-दोज़ख़, हमारा दिल सही
फ़ितन:-ए-शोर ए-क़यामत, किसकी आब-ओ-गिल में है

है दिल-ए-शोरीद:-ए-ग़ालिब, तिलिस्म-ए-पेच-ओ-ताब
रहम कर अपनी तमन्ना पर, कि किस मुश्किल में है

दिल से तिरी निगाह जिगर तक उतर गई
दोनों को इक अदा में रज़ामन्द कर गई

शक़ हो गया है सीनः, ख़ुशा लज़्ज़त-ए-फ़राग़
तक्लीफ़-ए-पर्दः दारि-ए-ज़ख़्म-ए-जिगर गई

वह बादः-ए-शबानः की सरमस्तियाँ कहाँ
उठिये बस अब, कि लज़्ज़त-ए-ख़्वाब-ए-सहर गई

उड़ती फिरे है ख़ाक मिरी, कू-ए-यार में
बारे अब अय हवा, हवस-ए-बाल-ओ-पर गई

देखो तो, दिलफ़रेबि-ए-अन्दाज़-ए-नक़्श-ए-पा
मौज-ए-ख़िराम-ए-यार भी, क्या गुल कतर गई

हर बुल्हवस ने हुस्न परस्ती शि'आर की
अब आबरू-ए-शेवः-ए-अह्ल-ए-नज़र गई

नज़्ज़ारे ने भी, काम किया वाँ निक़ाब का
मस्ती से हर निगह तिरे रुख़ पर बिखर गई

फ़रदा-ओ-दी का तफ़रिक़ः यक बार मिट गया
कल तुम गये, कि हम प क़यामत गुज़र गई

मारा ज़माने ने, असदुल्लाह खाँ, तुम्हें
वह वलवले कहाँ, वह जवानी किधर गई

१६०

तस्कीं को हम न रोयें, जो ज़ौक़-ए-नज़र मिले
हूरान-ए-ख़ुल्द में तिरी सूरत मगर मिले

अपनी गली में, मुझको न कर दफ़्न, बा'द-ए-क़त्ल
मेरे पते से खल्क़ को क्यों तेरा घर मिले

साक़ीगरी की शर्म करो आज; वर्नः हम
हर शब पिया ही करते हैं मै, जिस क़दर मिले

तुझसे तो कुछ कलाम नहीं, लेकिन अय नदीम
मेरा सलाम कहियो, अगर नामःबर मिले

तुमको भी हम दिखायें, कि मजनूँ ने क्या किया
फ़ुर्सत कशाकश-ए-ग़म-ए-पिन्हाँ से गर मिले

लाज़िम नहीं, कि ख़िज़्र की हम पैरवी करें
माना कि इक बुज़ुर्ग हमें हमसफ़र मिले

अय साकिनान-ए-कूचः-ए-दिल्दार, देखना
तुमको कहीं जो ग़ालिब-ए-आशुफ़्तः सर मिले

१६१

कोई दिन, गर जिन्दगानी और है
अपने जी में हम ने ठानी और है

आतश-ए-दोज़ख़ में, यह गर्मी, कहाँ
सोज़-ए-ग़म्हा-ए-निहानी और है

बारहा देखी हैं उनकी रंजिशें
पर कुछ अबके सरगिरानी और है

दे के ख़त, मुँह देखता है नामःबर
कुछ तो पैग़ाम-ए-ज़बानी और है

क़ाते'-ए-आ'मार, हैं अक्सर नुजूम
वह बला-ए-आस्मानी और है

हो चुकीं, ग़ालिब, बलायें सब तमाम
एक मर्ग-ए-नागहानी और है

१६२

कोई उम्मीद बर नहीं आती
कोई सूरत नज़र नहीं आती

मौत का एक दिन मु'अइयन है
नीन्द क्यों रात भर नहीं आती

आगे आती थी हाल-ए-दिल प हँसी
अब किसी बात पर नहीं आती

जानता हूँ सवाब-ए-ता'अत-ओ-ज़ोह्द
पर तबी'अत इधर नहीं आती

है कुछ ऐसी ही बात, जो चुप हूँ
वर्नः क्या बात कर नहीं आती

क्यों न चीख़ूँ, कि याद करते हैं
मेरी आवाज़ गर नहीं आती

दाग़-ए-दिल गर नज़र नहीं आता
बू भी अय चारःगर नहीं आती

हम वहाँ हैं, जहाँ से हम को भी
कुछ हमारी ख़बर नहीं आती

मरते हैं आरज़ू में मरने की
मौत आती है, पर नहीं आती

का'बे किस मुँह से जाओगे ग़ालिब
शर्म तुम को मगर नहीं आती

दिल-ए-नादाँ, तुझे हुआ क्या है
आख़िर इस दर्द की दवा क्या है

हम हैं मुश्ताक़ और वह बेज़ार
या इलाही, यह माजरा क्या है

मैं भी मुँह में ज़बान रखता हूँ
काश, पूछो, कि मुद्द'आ क्या है

क़त'अ:

जबकि तुझ बिन नहीं कोई मौजूद
फिर यह हँगामः अय ख़ुदा क्या है

यह परी चेह्रः लोग कैसे हैं
ग़मज़ः-ओ-'अिश्वः-ओ-अदा क्या है

शिकन-ए-ज़ुल्फ़-ए-'अँबरीं क्यों है
निगह-ए-चश्म-ए-सुर्मः सा क्या है

सब्ज़ः-ओ-गुल कहाँ से आये हैं
अब्र क्या चीज़ है, हवा क्या है

हमको उनसे, वफ़ा की है उम्मीद
जो नहीं जानते, वफ़ा क्या है

हाँ भला कर, तिरा भला होगा
और दर्वेश की सदा क्या है

जान तुम पर निसार करता हूँ
मैं नहीं जानता, दु'आ क्या है

मैं ने माना कि कुछ नहीं ग़ालिब
मुफ़्त हाथ आये, तो बुरा क्या है

१६४

कहते तो हो तुम सब, कि बुत-ए-ग़ालियः मू आये
इक मर्तबः घबरा के कहो कोई कि, वो आये

हूँ कशमकश-ए-नज़्'अ में, हाँ जज़्ब-ए-महब्बत
कुछ कह न सकूँ, पर वह मिरे पूछने को आये

है सा'अिक़ः-ओ-शो'लः-ओ-सीमाब का 'आलम
आना ही समझ में मिरी आता नहीं, गो आये

ज़ाहिर है, कि घबरा के न भागेंगे नकीरैन
हाँ, मुँह से मगर बादः-ए-दोशीनः की बू आये

जल्लाद से डरते हैं, न वा'अिज़ से झगड़ते
हम समझे हुये हैं उसे, जिस भेस में जो आये

हाँ अहल-ए-तलब, कौन सुने ता'नः-ए-नायाफ़्त
देखा, कि वह मिलता नहीं, अपने ही को खो आये

अपना नहीं वह शेवः, कि आराम से बैठें
उस दर प नहीं बार, तो का'बे ही को हो आये

की हमनफ़सों ने असर-ए-गिरियः में तक़रीर
अच्छे रहे आप उस से, मगर मुझको डुबो आये

उस अंजुमन-ए-नाज़ की क्या बात है, ग़ालिब
हम भी गये वाँ, और तिरी तक़दीर को रो आये

१६५

फिर कुछ इक दिल की बेक़रारी है
सीनः जोया-ए-ज़ख़्म-ए-कारी है

फिर जिगर खोदने लगा नाख़ुन
आमद-ए-फ़स्ल-ए-लालः कारी है

क़िबलः-ए-मक़्सद-ए-निगाह-ए-नियाज़
फिर वही पर्दः-ए-'अमारी है

चश्म दल्लाल-ए-जिन्स-ए-रुसवाई
दिल ख़रीदार-ए-ज़ौक़-ए-ख़्वारी है

वही सदरँग नालः फ़रसाई
वही सदगूनाः अश्क बारी है

दिल हवा-ए-ख़िराम-ए-नाज़ से, फिर
महृशरिस्तान -ए- बेक़रारी है

जल्वः फिर अर्ज़-ए-नाज़ करता है
रोज़ बाज़ार-ए-जाँसुपारी है

फिर उसी बेवफ़ा प मरते हैं
फिर वही जिन्दगी हमारी है

क़त'अः

फिर खुला है दर-ए-'अदालत-ए-नाज़
गर्म बाज़ार-ए-फ़ौजदारी है

हो रहा है जहान में अँधेर
ज़ुल्फ़ की फिर सरिश्तःदारी है

फिर दिया पारः-ए-जिगर ने सवाल
एक फ़रियाद-ओ-आह-ओ-ज़ारी है

फिर हुये हैं गवाह-ए-'अिश्क़ तलब
अश्क बारी का हुक्म जारी है

दिल-ओ-मिश़गाँ का जो मुक़द्दमः था
आज फिर उसकी रूबकारी है

बेख़ुदी बे सबब नहीं, ग़ालिब
कुछ तो है, जिस की पर्दःदारी है

१६६

जुनूँ तोह्मत कश-ए-तस्कीं न हो, गर शाद्मानी की
नमक पाश-ए-ख़राश-ए-दिल है, लज़्ज़त ज़िन्दगानी की

कशाकशहा-ए-हस्ती से करे क्या स'अि-ए-आज़ादी
हुई ज़ंजीर, मौज-ए-आब को फ़ुर्सत रवानी की

पस अज़ मुर्दन भी, दीवानः ज़ियारत गाह-ए-तिफ़्लाँ है
शरार-ए-सँग ने तुर्बत प मेरी गुल फ़िशानी की

१६७

निकोहिश है सज़ा, फ़रियादि-ए-बेदाद-ए-दिलबर की
मबादा ख़न्दः-ए-दन्दाँ नुमा हो सुब्ह महशर की

रग-ए-लैला को ख़ाक-ए-दश्त-ए-मजनूँ, रेशगी बख़्शे
अगर बोदे बजाये दानः देह्क़ाँ, नोक नश्तर की

पर-ए-परवानः, शायद बादबान-ए-कश्ति-ए-मै था
हुई मज्लिस की गर्मी से रवानी दौर-ए-साग़र की

करूँ बेदाद-ए-ज़ौक़-ए-परफ़िशानी 'अर्ज़, क्या क़ुदरत
कि ताक़त उड़ गई, उड़ने से पहले, मेरे शहपर की

कहाँ तक रोऊँ उसके ख़ेमे के पीछे, क़यामत है
मिरी क़िस्मत में, यारब, क्या न थी दीवार पत्थर की

१६८

बे ए'तिदालियों से, सुबुक सब में हम हुये
जितने ज़ियादः हो गये, उतने ही कम हुये

पिन्हाँ था दाम-ए-सख़्त, क़रीब आशियान के
उड़ने न पाये थे, कि गिरफ्तार हम हुये

हस्ती हमारी, अपनी फ़ना पर दलील है
याँ तक मिटे, कि आप हम अपनी क़सम हुये

सख़्ती कशान-ए-अिश्क़ की, पूछे है क्या ख़बर
वह लोग रफ़्तः रफ़्तः सरापा अलम हुये

तेरी वफ़ा से क्या हो तलाफ़ी, कि दह्‌र में
तेरे सिवा भी, हम प बहुत से सितम हुये

लिखते रहे, जुनूँ की हिकायात-ए-ख़ूँ चकाँ
हरचन्द इस में हाथ हमारे क़लम हुये

अल्लाह री तेरी तुन्दि-ए-ख़ू, जिस के बीम से
अज्ज़ा-ए-नालः दिल में मिरे रिज़्क़-ए-हम हुये

अहल ए-हवस की फ़त्‌ह्‌ है, तर्क-ए-नबर्द-ए-'अिश्क़
जो पाँव उठ गये, वही उनके 'अलम हुये

नाले 'अदम में चन्द हमारे सिपुर्द थे
जो वाँ न खिंच सके, सो वह याँ आके दम हुये

छोड़ी, असद न हमने गदाई में दिल्लगी
साइल हुये, तो 'आशिक़-ए-अहल-ए-करम हुये

जो न नक़्द-ए-दाग़-ए-दिल की, करे शो'लः पास्‌बानी
तो फ़सुर्दगी निहाँ है, ब कमीन-ए-बेज़बानी

मुझे उस से क्या तवक़्क़ो'अ, ब ज़मानः-ए-जवानी
कभी कोदकी में जिसने, न सुनी मिरी कहानी

यों ही दुख किसी को देना नहीं ख़ूब, वर्नः कहता
कि मिरे 'अदू को, यारब, मिले मेरी ज़िन्दगानी

१७०

ज़ुल्मत कदे में मेरे, शब-ए-ग़म का जोश है
इक शम्'अ है दलील-ए-सहर, सो खमोश है

ने मुश़्दः-ए-विसाल, न नज़्ज़ारः-ए-जमाल
मुद्दत हुई, कि आशित-ए-चश्म-ओ-गोश है

मै ने किया है, हुस्न-ए-ख़ुदआरा को, बेहिजाब
अय शौक़, याँ इजाजत-ए-तस्लीम-ए-होश है

गौहर को 'अिक़्द-ए-गर्दन-ए-ख़ूबाँ में देखना
क्या औज पर सितारः-ए-गौहर फ़रोश है

दीदार बादः, हौसलः साक़ी, निगाह मस्त
बज़्म-ए-खयाल, मैकदः-ए-बेखरोश है

क़त'अः

अय ताजः वारिदान-ए-बिसात-ए-हवा-ए-दिल
ज़िन्हार, अगर तुम्हें हवस-ए-नाय-ओ-नोश है

देखो मुझे, जो दीदः-ए-'अिब्रत निगाह हो
मेरी सुनो, जो गोश-ए-नसीहत नियोश है

साक़ी, ब जलवः दुश्मन-ए-ईमान-ओ-आगही
मुतरिब, ब नग़्मः, रहज़न-ए-तम्कीन-ओ-होश है

या शब को देखते थे, कि हर गोशः-ए-बिसात
दामान-ए-बाग़बान-ओ-कफ़-ए-गुलफरोश है

लुत्फ-ए-ख़िराम ए-साक़ि-ओ-ज़ौक़-ए-सदा-ए-चँग
यह जन्नत-ए-निगाह, वह फ़िर्दौस-ए-गोश है

या सुब्ह दम जो देखिये आकर, तो बज़्म में
ने वह सुरू-ओ-सोज़, न जोश-ओ-ख़रोश है

दाग़-ए-फ़िराक़-ए-सोह्बत-ए-शब की जली हुई
इक शम्'अ रह गई है, सो वह भी खमोश है

आते हैं ग़ैब से, यह मज़ामीं खयाल में
ग़ालिब, सरीर-ए-खामः नवा-ए-सरोश है

आ, कि मिरी जान को क़रार नहीं है
ताक़त-ए-बेदाद-ए-इन्तिज़ार नहीं है

देते हैं जन्नत, हयात-ए-दह्र के बदले
नश्शः ब अन्दाज़ः-ए-ख़ुमार नहीं है

गिरियः निकाले है तिरी बज़्म से, मुझको
हाय, कि रोने प इख़्तियार नहीं है

हम से, 'अबस है, गुमान-ए-रँजिश-ए-खातिर
खाक में 'अुश्शाक़ की ग़ुबार नहीं है

दिल से उठा लुत्फ़-ए-जल्वःहा-ए-म'आनी
ग़ैर-ए-गुल, आईनः-ए-बहार नहीं है

क़त्ल का मेरे किया है 'अह्द तो बारे
वाय, अगर 'अह्द उस्तुवार नहीं है

तू ने क़सम मैकशी की खाई है, ग़ालिब
तेरी क़सम का कुछ़ ए'तिबार नहीं है

१७२

हुजूम-ए-ग़म से, याँ तक सरनिगूनी मुझको हासिल है
कि तार-ए-दामन-ओ-तार-ए-नज़र में फ़र्क़ मुश्किल है

रफ़ू-ए-ज़ख़्म से मतलब है लज़्ज़त ज़ख़्म-ए-सोज़न की
समझियो मत, कि पास-ए-दर्द से, दीवानः ग़ाफ़िल है

वह गुल जिस गुलसिताँ में जल्वः फ़रमाई करे, ग़ालिब
चिटकना ग़ुँचः-ए-गुल का, सदा-ए-ख़न्दः-ए-दिल है

१७३

पा ब दामन हो रहा हूँ, बसकि मैं सहरा नवर्द
ख़ार-ए-पा हैं, जौहर-ए-आईनः-ए-ज़ानू मुझे

देखना हालत मिरे दिल की, हमआग़ोशी के वक़्त
है निगाह-ए-आश्ना, तेरा सर-ए-हर मू, मुझे

हूँ सरापा साज़-ए-आहँग-ए-शिकायत, कुछ न पूछ
है यही बेहतर, कि लोगों में न छेड़े तू मुझे

१७४

जिस बज़्म में, तू नाज़ से, गुफ़्तार में आवे
जाँ, काल्बुद-ए-सूरत-ए-दीवार में आवे

साये की तरह साथ फिरें सर्व-ओ-सनोबर
तू इस क़द-ए-दिलकश से, जो गुलज़ार में आवे

तब नाज़-ए-गिराँ मायगि-ए-अश्क बजा है
जब लख़्त-ए-जिगर दीदः-ए-ख़ूँबार में आवे

दे मुझको शिकायत की इजाज़त, कि सितमगर
कुछ तुझको मज़ा भी मिरे आज़ार में आवे

उस चश्म-ए-फ़ुसूँगर का, अगर पाये इशारा
तूती की तरह आइनः गुफ़्तार में आवे

काँटों की ज़बाँ सूख गई प्यास से, यारब
इक आब्लः पा वादि-ए-पुरख़ार में आवे

मरजाऊँ न क्यों रश्क से, जब वह तन-ए-नाज़ुक
आग़ोश-ए-ख़म-ए-हल्क़ः-ए-ज़ुन्नार में आवे

ग़ारतगर-ए-नामूस न हो, गर हवस-ए-ज़र
क्यों शाहिद-ए-गुल, बाग़ से बाज़ार में आवे

तब चाक-ए-गरीबाँ का मज़ा है, दिल-ए-नादाँ
जब इक नफ़स उलझा हुआ, हर तार में आवे

आतशकदः है सीनः मिरा, राज़-ए-निहाँ से
अय वाय, अगर मा'रिज़-ए-इज़्हार में आवे

गँजीनः-ए-मा'नी का तिलिस्म उसको समझिये
जो लफ़्ज़ कि ग़ालिब, मिरे अश'आर में आवे

हुस्न-ए- मह, गरचे: ब हँगाम-ए-कमाल, अच्छा है
उससे मेरा मह-ए-ख़ुर्शीद जमाल अच्छा है

बोसः देते नहीं, और दिल प है हर लह्ज़ः निगाह
जी में कहते हैं, कि मुफ़्त आये, तो माल अच्छा है

और बाज़ार से ले आये, अगर टूट गया
साग़र-ए-जम से मिरा जाम-ए-सिफ़ाल अच्छा है

बेतलब दें तो मज़ा उसमें सिवा मिलता है
वह गदा, जिसको न हो ख़ू-ए-सवाल, अच्छा है

उनके देखे से, जो आजाती है मुँह पर रौनक़
वह समझते हैं कि बीमार का हाल अच्छा है

देखिये, पाते हैं 'उश्शाक़, बुतों से क्या फ़ैज़
इक ब्रह्मन ने कहा है, कि यह साल अच्छा है

हम सुख़न तेशे ने फ़रहाद को, शीरीं से किया
जिस तरह का कि किसी में हो कमाल, अच्छा है

क़तरः दरिया में जो मिल जाय, तो दरिया हो जाय
काम अच्छा है वह, जिसका कि मआल अच्छा है

ख़िज़्र सुलताँ को रखे, ख़ालिक़-ए-अकबर सरसब्ज़
शाह के बाग़ में, यह ताज़ः निहाल अच्छा है

हम को मा'लूम है, जन्नत की हक़ीक़त, लेकिन
दिल के ख़ुश रखने को, ग़ालिब, यह ख़याल अच्छा है

१७६

न हुई गर मिरे मरने से तसल्ली, न सही
इम्तिहाँ और भी बाक़ी हो, तो यह भी न सही

ख़ार ख़ार-ए-अलम-ए-हस्रत-ए-दीदार तो है
शौक़, गुलचीन-ए-गुलिस्तान-ए-तसल्ली न सही

मै परस्ताँ, ख़ुम-ए-मै मुँह से लगाये ही बने
एक दिन गर न हुआ बज़्म में साक़ी, न सही

नफ़स-ए-क़ैस, कि है चश्म-ओ-चराग़-ए-सह्रा
गर नहीं शम'-ए-सियहख़ानः-ए-लैला, न सही

एक हँगामे प मौक़ूफ़, है घर की रौनक़
नौहः-ए-ग़म ही सही, नग़्मः-ए-शादी न सही

न सताइश की तमन्ना, न सिले की परवा
गर नहीं हैं मिरे अश'आर में मा'नी न सही

'अिश्रत-ए-सोह्बत-ए-ख़ूबाँ ही ग़नीमत समझो
न हुई, ग़ालिब, अगर 'अुम्र-ए-तबी'अी, न सही

१७७

'अजब नशात से, जल्लाद के, चले हैं हम, आगे
कि अपने साये से सर, पाँव से है दो क़दम आगे

क़ज़ा ने था मुझे चाहा, ख़राब-ए-बाद:-ए-उल्फ़त
फ़क़त ख़राब लिखा, बस न चल सका क़लम आगे

ग़म-ए-ज़मान: ने झाड़ी, नशात-ए-'अिश्क़ की मस्ती
वगरन: हम भी उठाते थे लज़्ज़त-ए-अलम, आगे

ख़ुदा के वास्ते, दाद इस जुनून-ए-शौक़ की देना
कि उसके दर प पहुँचते हैं नाम:बर से हम, आगे

यह 'अुम्र भर जो परीशानियाँ उठाई हैं, हम ने
तुम्हारे आइयो, अय तुर्र:हा-ए-ख़म ब ख़म, आगे

दिल-ओ-जिगर में परअफ़शाँ, जो एक मौज:-ए-ख़ूँ है
हम अपने ज़ा'म में समझे हुये थे इसको, दम आगे

क़सम जनाज़े प आने की मेरे खाते हैं, ग़ालिब
हमेश: खाते थे जो, मेरी जान की क़सम, आगे

शिक्वे के नाम से, बेमेह्र ख़फ़ा होता है
यह भी मत कह, कि जो कहिये, तो गिला होता है

पुर हूँ मैं शिक्वे से यों, राग से जैसे बाजा
इक ज़रा छेड़िये, फिर देखिये, क्या होता है

गो समझता नहीं, पर हुस्न-ए-तलाफ़ी देखो
शिक्वः-ए-जौर से, सरगर्म-ए-जफ़ा होता है

'अिश्क़ की राह में, है चर्ख़-ए-मकौकब की वह चाल
सुस्त रौ जैसे कोई आबलः पा होता है

क्यों न ठहरें हदफ़-ए-नावक-ए-बेदाद, कि हम
आप उठा लाते हैं, गर तीर ख़ता होता है

ख़ूब था, पहले से होते जो हम अपने बदख़्वाह
कि भला चाहते हैं और बुरा होता है

नालः जाता था, परे 'अर्श से मेरा, और अब
लब तक आता है जो ऐसा ही रसा होता है

क़त'ग्र:

ख़ामः मेरा, कि वह है बारबद-ए-बज़्म-ए-सुखन
शाह की मद्ह में, यों नग़्मः सरा होता है

अय शहनशाह-ए-क्वाकिब सिपह-ओ-मेह्र 'अलम
तेरे इक्राम का हक़, किस से अदा होता है

सात इक़्लीम का हासिल जो फ़राहम कीजे
तो वह लश्कर का तिरे ना'ल बहा होता है

हर महीने में, जो यह बद्र से होता है हिलाल
आस्ताँ पर तिरे मह नासियः सा होता है

मैं जो गुस्ताख़ हूँ आईन-ए-ग़ज़ल ख्वानी में
यह भी तेरा ही करम ज़ौक़ फ़िज़ा होता है

रखियो, ग़ालिब, मुझे इस तल्ख़नवाई में मु'आफ़
आज कुछ दर्द मेरे दिल में सिवा होता है

१७९

हर एक बात प कहते हो तुम, कि तू क्या है
तुम्हीं कहो कि यह अन्दाज़-ए-गुफ़्तुगू क्या है

न शो'ले में यह करिश्मः न बर्क़ में यह अदा
कोई बताओ, कि वह शोख़-ए-तुन्द ख़ू क्या है

यह रश्क है, कि वह होता है हमसुख़न तुमसे
वगरनः ख़ौफ़-ए-बद आमोज़ि-ए-'अदू क्या है

चिपक रहा है बदन पर, लहू से, पैराहन
हमारी जैब को अब हाजत-ए-रफ़ू क्या है

जला है जिस्म जहाँ, दिल भी जल गया होगा
कुरेदते हो जो अब राख, जुस्तुजू क्या है

रगों में दौड़ते फिरने के, हम नहीं क़ाइल
जब आँख ही से न टपका, तो फिर लहू क्या है

वह चीज़, जिसके लिये हमको हो, बिहिश्त 'अज़ीज़
सिवाये बादः-ए-गुलफ़ाम-ए-मुश्क बू क्या है

पियूँ शराब, अगर ख़ुम भी देख लूँ दो चार
यह शीशः-ओ-क़दह-ओ-कूज़ः-ओ-सुबू क्या है

रही न ताक़त-ए-गुफ़्तार, और अगर हो भी
तो किस उमीद प कहिये कि आरज़ू क्या है

हुआ है शह का मुसाहिब, फिरे है इतराता
वगरनः शहर में ग़ालिब की आबरू क्या है

१८०

मैं उन्हें छेड़ूँ, और कुछ न कहें
चल निकलते, जो मैं पिये होते

क़ेह्र हो, या बला हो, जो कुछ हो
काशके, तुम मिरे लिये होते

मेरी क़िस्मत में ग़म गर इतना था
दिल भी, यारब, कई दिये होते

आ ही जाता वह राह पर, ग़ालिब
कोई दिन और भी जिये होते

१८१

ग़ैर लें मह्‌फ़िल में, बोसे जाम के
हम रहें यों तश्नः लब, पैग़ाम के

ख़स्तगी का तुमसे क्या शिकवः कि यह
हथ्‌कण्डे हैं चर्ख़-ए-नीली फ़ाम के

ख़त लिखेंगे, गरचेः मतलब कुछ न हो
हम तो 'आशिक़ हैं, तुम्हारे नाम के

रात पी ज़मज़म प मै और सुब्ह दम
धोये धब्बे जामः-ए-एह्राम के

दिल को आँखों ने फँसाया, क्या मगर
यह भी हल्क़े हैं तुम्हारे दाम के

शाह के है ग़ुस्ल-ए-सेहत की ख़बर
देखिये, कब दिन फिरें हम्माम के

'अिश्क़ ने, ग़ालिब निकम्मा कर दिया
वर्नः हम भी आदमी थे काम के

१८२

फिर इस अन्दाज़ से बहार आई
कि हुये मेह्र-ओ-मह तमाशाई

देखो, अय साकिनान-ए-ख़ित्तः-ए-ख़ाक
इस को कहते हैं 'आलम आराई

कि ज़मीं हो गई है सर ता सर
रूकश-ए-सत्ह-ए-चर्ख़-ए-मीनाई

सब्ज़े को जब कहीं जगह न मिली
बन गया रू-ए-आब पर काई

सब्ज़ः-ओ-गुल के देखने के लिये
चश्म-ए-नर्गिस को दी है बीनाई

है हवा में शराब की तासीर
बादः नोशी है बाद पैमाई

क्यों न दुनिया को हो ख़ुशी, ग़ालिब
शाह-ए-दींदार ने शिफ़ा पाई

१८३

तग़ाफ़ुल दोस्त हूँ, मेरा दिमाग़-ए-'अिज्ज़ 'आली है
अगर पहलूतिही कीजे, तो जा मेरी भी ख़ाली है

रहा आबाद 'आलम, अह्ल-ए-हिम्मत के न होने से
भरे हैं जिस क़दर जाम-ओ-सुबू, मैख़ानः ख़ाली है

१८४

कब वह सुनता है कहानी मेरी
और फिर वह भी ज़बानी मेरी

ख़लिश-ए-ग़मज़ः-ए-ख़ूँरेज़ न पूछ
देख ख़ूँनाबः फ़िशानी मेरी

क्या बयाँ करके मिरा, रोयेंगे यार
मगर आशुफ्तः बयानी मेरी

हूँ ज़िख़ुद रफ़्तः-ए-बैदा-ए-ख़याल
भूल जाना है, निशानी मेरी

मुतक़ाबिल है, मुक़ाबिल मेरा
रुक गया, देख रवानी मेरी

क़द्र-ए-सँग-ए-सर-ए-रह रखता हूँ
सख़्त अरज़ाँ है, गिरानी मेरी

गर्द बाद-ए-रह-ए-बेताबी हूँ
सरसर-ए-शौक़ है, बानी मेरी

दहन उसका, जो न मा'लूम हुआ
खुल गई हेच मदानी मेरी

कर दिया ज़ो'फ़ ने 'आजिज़, ग़ालिब
नँग-ए-पीरी है, जवानी मेरी

नक़्श-ए-नाज़-ए-बुत-ए-तन्नाज़, ब आग़ोश-ए-रक़ीब
पा-ए-ताऊस पै-ए-ख़ामः-ए-मानी माँगे

तू वह बदख़ू, कि तहय्युर को तमाशा जाने
ग़म वह अफ़सानः, कि आशुफ्तः बयानी माँगे

वह तप-ए-'अिश्क़-ए-तमन्ना है, कि फिर सूरत-ए-शम्'अ
शो'लः ता नब्ज़-ए-जिगर रेशः दवानी माँगे

१८६

गुलशन को तिरी सोह्बत, अज़ बसकि ख़ुश आई है
हर ग़ुंचे का गुल होना, आग़ोश कुशाई है

वाँ कुँग्गुर-ए-इस्तिग़ना, हर दम है बलन्दी पर
याँ नाले को और उल्टा, दा'वा-ए-रसाई है

अज़ बसकि सिखाता है ग़म, ज़ब्त के अन्दाज़े
जो दाग़ नज़र आया, इक चश्म नुमाई है

१८७

जिस ज़ख़्म की हो सकती हो तद्बीर, रफ़ू की
लिख दीजियो, यारब, उसे क़िस्मत में 'अदू की

अच्छा है सर अँगुश्त-ए-हिनाई का तसव्वुर
दिल में नज़र आती तो है, इक बूँद लहू की

क्यों डरते हो, 'अुश्शाक़ की बे हौसलगी से
याँ तो कोई सुनता नहीं फ़रियाद किसू की

दश्ने ने कभी मुँह न लगाया हो जिगर को
ख़ंजर ने कभी बात न पूछी हो गुलू की

सद हैफ़ वह नाकाम, कि इक 'अुम्र से, ग़ालिब
हस्रत में रहे एक बुत-ए-'अरबदः जू की

१८८

सीमाब पुश्त गर्मि-ए-आईनः दे है, हम
हैराँ किये हुये हैं दिल-ए-बेक़रार के

आग़ोश-ए-गुल कुशूदः बराये विदा'अ है
अय 'अन्दलीब, चल, कि चले दिन बहार के

१८९

है वस्ल हिज्र, 'आलम-ए-तम्कीन-ओ-ज़ब्त में
मा'शूक़-ए-शोख़-ओ-'आशिक़-ए-दीवानः चाहिये

उस लब से मिल ही जायगा बोसः कभी तो, हाँ
शौक़-ए-फ़ुज़ूल-ओ-जुरअत-ए-रिन्दानः चाहिये

चाहिये अच्छों को जितना चाहिये
यह अगर चाहें, तो फिर क्या चाहिये

सोह्बत-ए-रिन्दाँ से वाजिब है हज़र
जा-ए-मै अपने को खेंचा चाहिये

चाहने को तेरे क्या समझा था दिल
बारे, अब इस से भी समझा चाहिये

चाक मत कर जैब बे अय्याम-ए-गुल
कुछ उधर का भी इशारा चाहिये

दोस्ती का पर्दः, है बेगानगी
मुँह छुपाना हम से छोड़ा चाहिये

दुश्मनी ने मेरी खोया ग़ैर को
किस क़दर दुश्मन है, देखा चाहिये

अपनी रुस्वाई में क्या चलती है स'अि
यार ही हँगामः आरा चाहिये

मुनहसिर मरने प हो, जिसकी उमीद
नाउमीदी उस की, देखा चाहिये

ग़ाफ़िल, इन मह तल्'अतों के वास्ते
चाहने वाला भी अच्छा चाहिये

चाहते हैं ख़ूबरुओं को असद
आप की सूरत तो देखा चाहिये

१९१

हर क़दम दूरि-ए-मंज़िल है नुमायाँ मुझसे
मेरी रफ़्तार से भागे है, बयाबाँ मुझसे

दर्स-ए-'अुन्वान-ए-तमाशा, ब तग़ाफ़ुल ख़ुश्तर
है निगह रिश्तः-ए-शीराज़ः-ए-मिश्गाँ मुझसे

वहशत-ए-आतश-ए-दिल से, शब-ए-तन्हाई में
सूरत-ए-दूद, रहा सायः गुरेज़ाँ मुझसे

ग़म-ए-'अुश्शाक़ न हो, सादगी आमोज़-ए-बुताँ
किस क़दर ख़ानः-ए-आईनः है वीराँ मुझसे

असर-ए-आबलः से, जादः-ए-सहरा-ए-जुनूँ
सूरत-ए-रिश्तः-ए-गौहर है चराग़ाँ मुझसे

बेख़ुदी बिस्तर-ए-तम्हीद-ए-फ़राग़त हूजो
पुर है साये की तरह, मेरा शबिस्ताँ मुझसे

शौक़-ए-दीदार में, गर तू मुझे गर्दन मारे
हो निगह, मिस्ल-ए-गुल-ए-शम्'अ, परीशाँ मुझसे

बेकसीहा-ए-शब-ए-हिज्र की वहशत, हय, हय
सायः ख़ुर्शीद-ए-क़यामत में है पिन्हाँ मुझसे

गर्दिश-ए-साग़र-ए-सद् जल्वः-ए-रँगीं, तुझसे
आइनःदारि-ए-यक दीदः-ए-हैराँ, मुझसे

निगह-ए-गर्म से इक आग टपकती है, असद
है चराग़ाँ, खस-ओ-खाशाक-ए-गुलिस्ताँ मुझसे

१९२

नुक्तःचीं है, ग़म-ए-दिल उसको सुनाये न बने
क्या बने बात, जहाँ बात बनाये न बने

मैं बुलाता तो हूँ उसको, मगर अय जज़्बः-ए-दिल
उस प बन जाये कुछ ऐसी, कि बिन आये न बने

खेल समझा है, कहीं छोड़ न दे, भूल न जाये
काश, यों भी हो, कि बिन मेरे सताये न बने

ग़ैर फिरता है, लिये यों तिरे खत को, कि अगर
कोई पूछे, कि यह क्या है, तो छुपाये न बने

इस नज़ाकत का बुरा हो, वह भले हैं, तो क्या
हाथ आवें, तो उन्हें हाथ लगाये न बने

कह सके कौन, कि यह जल्वःगरी किसकी है
पर्दः छोड़ा है वह उसने, कि उठाये न बने

मौत की राह न देखूँ, कि बिन आये न रहे
तुम को चाहूँ, कि न आओ, तो बुलाये न बने

बोझ वह सर से गिरा है, कि उठाये न उठे
काम वह आन पड़ा है, कि बनाये न बने

'अिश्क़ पर ज़ोर नहीं, है यह वह आतश, ग़ालिब
कि लगाये न लगे और बुझाये न बने

१९३

चाक की ख़्वाहिश, अगर वहशत ब 'अुरियानी करे
सुबूह की मानिन्द, ज़ख़्म-ए-दिल गरीबानी करे

जल्वे का तेरे वह 'आलम है, कि गर कीजे ख़याल
दीदः-ए-दिल को जियारत गाह-ए-हैरानी करे

है शिकस्तन से भी दिल नौमीद, यारब, कब तलक
आबगीनः कोह पर 'अर्ज़-ए-गिराँ जानी करे

मैकद: गर चश्म-ए-मस्त-ए-नाज़ से पावे शिकस्त
मू-ए-शीशः दीदः-ए-साग़र की मिशग़ानी करे

खत्त-ए-'आरिज़ से, लिखा है ज़ुल्फ़ को उल्फ़त ने 'अह्द
यक क़लम मंज़ूर है, जो कुछ परीशानी करे

१९४

वह आके ख़्वाब में, तस्कीन-ए-इज़्तिराब तो दे
वले मुझे तपिश-ए-दिल मजाल-ए-ख़्वाब तो दे

करे है क़त्ल, लगावट में तेरा रो देना
तिरी तरह कोई तेग़-ए-निगह को आब तो दे

दिखा के जुँबिश-ए-लब ही, तमाम कर हम को
न दे जो बोसः, तो मुँह से कहीं जवाब तो दे

पिलादे ओक से, साक़ी, जो हम से नफ़रत है
पियालः गर नहीं देता, न दे, शराब तो दे

असद, ख़ुशी से मिरे हाथ पाँव फूल गये
कहा जो उसने, ज़रा मेरे पाँव दाब तो दे

१९५

तपिश से मेरी, वक़्फ़-ए-कशमकश, हर तार-ए-बिस्तर है
मिरा सर रँज-ए-बालीं है, मिरा तन बार-ए-बिस्तर है

सरश्क-ए-सर बसहरा दाद:, नूरुल'ऐन-ए-दामन है
दिल-ए-बेदस्त-ओ-पा उफ्ताद:, बर्ख़ुर्दार-ए-बिस्तर है

ख़ुशा इक़बाल-ए-रँजूरी, 'अयादत को तुम आये हो
फ़रोग़-ए-शम्'-ए-बालीं, ताले'-ए-बेदार-ए-बिस्तर है

ब तूफ़ाँ गाह-ए-जोश-ए-इज़्तिराब-ए-शाम-ए-तन्हाई
शु'आ'-ए-आफ़ताब-ए-सुब्ह-ए-महशर तार-ए-बिस्तर है

अभी आती है बू, बालिश से, उसकी ज़ुल्फ़-ए-मिश्कीं की
हमारी दीद को, ख़्वाब-ए-ज़ुलैखा, 'आर-ए-बिस्तर है

कहूँ क्या, दिल की क्या हालत है, हिज्र-ए-यार में, ग़ालिब
कि बेताबी से, हर इक तार-ए-बिस्तर ख़ार-ए-बिस्तर है

१९६

ख़तर है, रिश्त:-ए-उल्फ़त रग-ए-गर्दन न हो जावे
ग़ुरूर-ए-दोस्ती आफ़त है, तू दुश्मन न हो जावे

समझ इस फ़स्ल में कोताहि-ए-नश्व-ओ-नुमा, ग़ालिब
अगर गुल, सर्व के क़ामत प, पैराहन न हो जावे

१९७

फ़रियाद की कोई लै नहीं है
नालः पाबन्द-ए-नै नहीं है

क्यों बोते हैं बाग़बान तूँबे
गर बाग़ गदा-ए-मै नहीं है

हर चन्द हर एक शै में तू है
पर तुझसी तो कोई शै नहीं है

हाँ, खाइयो मत फ़रेब-ए-हस्ती
हर चन्द कहें, कि है, नहीं है

शादी से गुज़र, कि ग़म न होवे
उर्दी जो न हो, तो दै नहीं है

क्यों रद्द-ए-क़दह करे है, ज़ाहिद
मै है, यह मगस की क़ै नहीं है

हस्ती है, न कुछ 'अदम है, ग़ालिब
आख़िर तू क्या है, अय, नहीं है

१९८

न पूछ नुस्ख़ः-ए-मरहम, जराहत-ए-दिल का
कि उस में रेज़ः-ए-अल्मास जुज़्व-ए-आ'ज़म है

बहुत दिनों में तग़ाफ़ुल ने तेरे पैदा की
वह इक निगह, कि बज़ाहिर निगाह से कम है

१९९

हम रश्क को अपने भी, गवारा नहीं करते
मरते हैं, वले उन की तमन्ना नहीं करते

दर पर्दः उन्हें ग़ैर से, है रब्त-ए-निहानी
ज़ाहिर का यह पर्दा है, कि पर्दा नहीं करते

यह बा'इस-ए-नौमीदि-ए-अर्बाब-ए-हवस है
ग़ालिब को बुरा कहते हो, अच्छा नहीं करते

२००

करे है बादः, तिरे लब से कस्ब-ए-रँग-ए-फ़रोग़
ख़त-ए-पियालः सरासर निगाह-ए-गुलचीं है

कभी तो इस दिल-ए-शोरीदः की भी दाद मिले
कि एक ‘अुम्र से हस्रत परस्त-ए-बालीं है

बजा है, गर न सुने, नालःहा-ए-बुलबुल-ए-ज़ार
कि गोश-ए-गुल, नम-ए-शबनम से, पँबः आगीं हैं

असद है नज़्‘अ में, चल बेवफ़ा, बराय ख़ुदा
मक़ाम-ए-तर्क-ए-हिजाब-ओ-विदा‘-ए-तम्कीं है

२०१

क्यों न हो चश्म-ए-बुताँ महृव-ए-तग़ाफ़ुल, क्यों न हो
या‘नी इस बीमार को नज़्ज़ारे से परहेज़ है

मरते मरते, देखने की आरज़ू रह जायगी
वाय नाकामी, कि उस काफ़िर का ख़ंजर तेज़ है

‘आरिज़-ए-गुल देख, रू-ए-यार याद आया, असद
जोशिश-ए-फ़स्ल-ए-बहारी इश्तियाक़ अँगेज़ है

२०२

दिया है दिल अगर उस को, बशर है, क्या कहिये
हुआ रक़ीब, तो हो, नामःबर है, क्या कहिये

यह ज़िद, कि आज न आवे और आये बिन न रहे
क़ज़ा से शिकवः हमें किस क़दर है, क्या कहिये

रहे है यों गह-ओ-बे गह, कि कू-ए-दोस्त को अब
अगर न कहिये कि दुश्मन का घर है, क्या कहिये

ज़िहे करिश्मः, कि यों दे रखा है हम को फ़रेब
कि बिन कहे ही उन्हें सब ख़बर है, क्या कहिये

समझ के करते हैं, बाज़ार में वह, पुरसिश-ए-हाल
कि यह कहे, कि सर-ए-रहगुज़र है, क्या कहिये

तुम्हें नहीं है सर-ए-रिश्तः-ए-वफ़ा का ख़याल
हमारे हाथ में कुछ है, मगर है क्या, कहिये

उन्हें सवाल प ज़ा'म-ए-जुनूँ है, क्यों लड़िये
हमें जवाब से क़त'-ए-नज़र है, क्या कहिये

हसद, सज़ा-ए-कमाल-ए-सुख़न है, क्या कीजे
सितम, बहा-ए-मता'-ए-हुनर है, क्या कहिये

कहा है किसने, कि ग़ालिब बुरा नहीं, लेकिन
सिवाये इसके, कि आशुफ़्तःसर है, क्या कहिये

देख कर दर पर्दः गर्म-ए-दामन अफ़्शानी मुझे
कर गई वाबस्तः-ए-तन मेरी 'उरियानी मुझे

बन गया तेग़-ए-निगाह-ए-यार का सँग-ए-फ़साँ
मरहबा मैं, क्या मुबारक है गिराँ जानी मुझे

क्यों न हो बेइल्तिफ़ाती, उस की ख़ातिर जम्'अ है
जानता है महूव-ए-पुरसिशहा-ए-पिन्हानी मुझे

मेरे ग़म ख़ाने की क़िस्मत जब रक़म होने लगी
लिख दिया मिंजुमलः-ए-अस्बाब-ए-वीरानी, मुझे

बदगुमाँ होता है वह काफ़िर, न होता, काशके
इस क़दर ज़ौक़-ए-नवा-ए-मुर्ग़-ए-बुस्तानी मुझे

वाय, वाँ भी शोर-ए-महूशर ने न दम लेने दिया
ले गया था गोर में, ज़ौक़-ए-तन आसानी मुझे

वा'दः आने का वफ़ा कीजे, यह क्या अन्दाज़ है
तुम ने क्यों सौंपी है, मेरे घर की दरबानी, मुझे

हाँ नशात-ए-आमद-ए-फ़स्ल-ए-बहारी, वाह, वाह
फिर हुआ है ताज़ः सौदा-ए-ग़ज़ल ख्वानी मुझे

दी मिरे भाई को हक़ ने, अज़ सर-ए-नौ ज़िन्दगी
मीरज़ा यूसुफ, है ग़ालिब, यूसुफ़-ए-सानी मुझे

२०४

याद है शादी में भी हँगामः-ए-यारब, मुझे
सुब्हः-ए-ज़ाहिद हुआ है, ख़न्दः ज़ेर-ए-लब मुझे

है कुशाद-ए-ख़ातिर-ए-वाबस्तः दर रह्न-ए-सुखन
था तिलिस्म-ए-क़ुफ़्ल-ए-अबजद, ख़ानः-ए-मक्तब मुझे

यारब, इस आशुफ़्तगी की दाद किस से चाहिये
रश्क, आसाइश प है ज़िन्दानियों की, अब मुझे

तब'अ है मुश्ताक़-ए-लज़्ज़तहा-ए-हस्रत, क्या करूँ
आरज़ू से, है शिकस्त-ए-आरज़ू मतलब मुझे

दिल लगा कर आप भी ग़ालिब मुझी से हो गये
'अिश्क़ से आते थे माने'अ, मीरज़ा साहब मुझे

२०५

हुज़ूर-ए-शाह में, अह्ल-ए-सुख़न की आज़माइश है
चमन में, ख़ुश नवायान-ए-चमन की आज़माइश है

क़द-ओ-गेसू में, क़ैस-ओ-कोहकन की आज़माइश है
जहाँ हम हैं वहाँ दार-ओ-रसन की आज़माइश है

करेंगे कोहकन के हौसले का इम्तिहाँ आख़िर
हनोज़ उस खस्त: के नीरू-ए-तन की आज़माइश है

नसीम-ए-मिस्र को क्या पीर-ए-कन'आँ की हवाख़्वाही
उसे यूसुफ़ की बू-ए-पैरहन की आज़माइश है

वह आया बज़्म में देखो न कहियो फिर कि ग़ाफ़िल थे
शिकेब-ओ-सब्र-ए-अह्ल-ए-अंजुमन की आज़माइश है

रहे दिल ही में तीर, अच्छा, जिगर के पार हो, बेह्तर
ग़रज़ शिस्त-ए-बुत-ए-नावक फ़िगन की आज़माइश है

नहीं कुछ सुब्ह:-ओ-ज़ुन्नार के फन्दे में गीराई
वफ़ादारी में शैख़-ओ-बर्हमन की आज़माइश है

पड़ा रह अय दिल-ए-वाबस्त: बेताबी से क्या हासिल
मगर फिर ताब-ए-ज़ुल्फ़-ए-पुरशिकन की आज़माइश है

रग-ओ-पै में जब उतरे ज़हर-ए-ग़म तब देखिये क्या हो
अभी तो तल्ख़ि-ए-काम-ओ-दहन की आज़माइश है

वह आवेंगे मिरे घर, वा'द: कैसा, देखना, ग़ालिब
नये फ़ितनों में अब चर्ख़-ए-कुहन की आज़माइश है

कभी नेकी भी उसके जी में गर आ जाये है मुझसे
जफायें कर के अपनी याद शर्मा जाये है मुझसे

ख़ुदाया, जज़्बः-ए-दिल की मगर तासीर उल्टी है
कि जितना खेंचता हूँ और खिचता जाये है मुझसे

वह बदख़ू, और मेरी दास्तान-ए-'अिश्क़ तूलानी
'अिबारत मुख्तसर, क़ासिद भी घबरा जाये है मुझसे

उधर वह बदगुमानी है, इधर यह नातवानी है
न पूछा जाये है उससे, न बोला जाये है मुझसे

सँभलने दे मुझे, अय नाउमीदी, क्या क़यामत है
कि दामान-ए-खयाल-ए-यार, छूटा जाये है मुझसे

तकल्लुफ बरतरफ़, नज़्ज़ारगी में भी सही, लेकिन
वह देखा जाये, कब यह जुल्म देखा जाये है मुझसे

हुये हैं पाँव ही पहले, नबर्द-ए-'अिश्क़ में ज़ख्मी
न भागा जाये है मुझसे, न ठहरा जाये है मुझसे

क़यामत है, कि होवे मुद्द'अी का हमसफर, ग़ालिब
वह काफ़िर, जो ख़ुदा को भी न सौंपा जाये है मुझसे

२०७

जिबस कि मश्क़-ए-तमाशा, जुनूँ 'अलामत है
कुशाद-ओ-बस्त-ए-मिश़ः, सेलि-ए-नदामत है

न जानूँ, क्योंकि मिटे दाग़-ए-ता'न-ए-बद 'अह्दी
तुझे कि आइनः भी वरतः-ए-मलामत है

ब पेच-ओ-ताब-ए-हवस, सिल्क-ए-'आफ़ियत मत तोड़
निगाह-ए-'अिज्ज़ सर-ए-रिश्तः-ए-सलामत है

वफ़ा मुक़ाबिल-ओ-दा'वा-ए-'अिश्क़ बे बुनियाद
जुनूँन-ए-साख़्तः-ओ-फ़स्ल-ए-गुल क़यामत है

२०८

लाग़र इतना हूँ, कि गर तू बज़्म में जा दे मुझे
मेरा ज़िम्मः, देखकर गर कोई बतला दे मुझे

क्या त'अज्जुब है, कि उसको देखकर आजाये रह्म
वाँ तलक कोई किसी हीले से पहुँचा दे मुझे

मुँह न दिखलावे, न दिखला, पर ब अन्दाज़-ए-'अिताब
खोलकर परदः, ज़रा आँखें ही दिखला दे मुझे

याँ तलक मेरी गिरफ्तारी से वह ख़ुश है, कि मैं
ज़ुल्फ़ गर बन जाऊँ, तो शाने में उल्झा दे मुझे

२०९

बाज़ीचः-ए-अत्फ़ाल है दुनिया, मिरे आगे
होता है शब-ओ-रोज़ तमाशा, मिरे आगे

इक खेल है औरँग-ए-सुलैमाँ, मिरे नज़दीक
इक बात है ए'जाज़-ए-मसीहा, मिरे आगे

जुज़ नाम, नहीं सूरत-ए-'आलम मुझे मंज़ूर
जुज़ वहम, नहीं हस्ति-ए-अशिया मिरे आगे

होता है निहाँ गर्द में सहरा, मिरे होते
घिसता है जबीं ख़ाक प दरिया, मिरे आगे

मत पूछ, कि क्या हाल है मेरा, तिरे पीछे
तू देख, कि क्या रँग है तेरा, मिरे आगे

सच कहते हो, ख़ुदबीन-ओ-ख़ुदआरा हूँ, न क्यों हूँ
बैठा है बुत-ए-आइनः सीमा मिरे आगे

फिर देखिये, अन्दाज़-ए-गुल अफ़शानि-ए-गुफ़्तार
रख दे कोई, पैमानः-ओ-सहबा मिरे आगे

नफ़रत का गुमाँ गुज़रे है, मैं रश्क से गुज़रा
क्योंकर कहूँ, लो नाम न उनका मिरे आगे

ईमाँ मुझे रोके है, तो खेंचे है मुझे कुफ़्र
का'बः मिरे पीछे है, कलीसा मिरे आगे

'आशिक़ हूँ, प मा'शूक़ फ़रेबी है मिरा काम
मजनूँ को बुरा कहती है लैला, मिरे आगे

ख़ुश होते हैं, पर वस्ल में यों मर नहीं जाते
आई शब-ए-हिज्राँ की तमन्ना, मिरे आगे

है मौजज़न इक क़ुल्ज़ुम-ए-ख़ूँ, काश, यही हो
आता है, अभी देखिये, क्या क्या, मिरे आगे

गो हाथ को जुँबिश नहीं, आँखों में तो दम है
रहने दो अभी साग़र-ओ-मीना मिरे आगे

हम पेशः-ओ-हम मश्रब-ओ-हम राज़ है मेरा
ग़ालिब को बुरा क्यों कहो, अच्छा, मिरे आगे

२१०

कहूँ जो हाल, तो कहते हो, मुद्द'आ कहिये
तुम्हीं कहो, कि जो तुम यों कहो, तो क्या कहिये

न कहियो ता'न से फिर तुम, कि, हम सितमगर हैं
मुझे तो ख़ू है, कि जो कुछ कहो, बजा, कहिये

वह नेश्तर सही, पर दिल में जब उतर जावे
निगाह-ए-नाज़ को फिर क्यों न आश्ना कहिये

नहीं ज़रि'अः-ए-राहत, जराहत-ए-पैकाँ
वह ज़ख़्म-ए-तेग़ है, जिसको कि दिलकुशा कहिये

जो मुद्द'ई बने, उसके न मुद्द'ई बनिये
जो नासज़ा कहे, उस को न नासज़ा कहिये

कहीं हक़ीक़त-ए-जाँकाहि-ए-मरज़ लिखिये
कहीं मुसीबत-ए-नासाज़ि-ए-दवा कहिये

कभी शिकायत-ए-रँज-ए-गिराँ नशीं कीजे
कभी हिकायत-ए-सब्र-ए-गुरेज़ पा कहिये

रहे न जान, तो क़ातिल को ख़ूँ बहा दीजे
कटे ज़बान, तो ख़ंजर को मर्हबा कहिये

नहीं निगार को उल्फ़त, न हो, निगार तो है
रवानि-ए-रविश-ओ-मस्ति-ए-अदा कहिये

नहीं बहार को फ़ुर्सत, न हो, बहार तो है
तरावत-ए-चमन-ओ-ख़ूबि-ए-हवा कहिये

सफ़ीनः जबकि कनारे प आ लगा, ग़ालिब
ख़ुदा से क्या सितम-ओ-जौर-ए-नाख़ुदा कहिये

२११

रोने से और 'अिश्क़ में बेबाक हो गये
धोये गये हम ऐसे, कि बस पाक हो गये

सर्फ़-ए-बहा-ए-मै हुये, आलात-ए-मैकशी
थे यह ही दो हिसाब, सो यों पाक हो गये

रुस्वा-ए-दह्र गो हुये, आवारगी से तुम
बारे तबी'अतों के तो चालाक हो गये

कहता है कौन नालः-ए-बुलबुल को, बे असर
पर्दे में गुल के लाख जिगर चाक हो गये

पूछे है क्या वुजूद-ओ-'अदम अह्ल-ए-शौक़ का
आप अपनी आग के ख़स-ओ-ख़ाशाक हो गये

करने गये थे उससे, तग़ाफ़ुल का हम गिला
की एक ही निगाह, कि बस ख़ाक हो गये

इस रँग से उठाई कल उसने असद की लाश
दुश्मन भी जिसको देख के ग़मनाक हो गये

२१२

नश्शःहा शादाब-ए-रँग-ओ-साज़हा मस्त-ए-तरब
शीशः-ए-मै सर्व-ए-सब्ज़-ए-जूइबार-ए-नग़्मः है

हमनशीं मत कह, कि, बरहम कर न बज़्मे 'ऐश-ए-दोस्त
वाँ तो मेरे नाले को भी ए'तिबार-ए-नग़्मः है

२१३

अर्ज़-ए-नाज़-ए-शोख़ि-ए-दँदाँ, बराय ख़न्दः है
दा'वः-ए-जम'इयत-ए-अह्बाब, जा-ए-ख़न्दः है

है 'अदम में, ग़ुंचः महव-ए-'इब्रत-ए-अंजाम-ए-गुल
यक जहाँ ज़ानू तअम्मुल दर क़फ़ा-ए-ख़न्दः है

कुल्फ़त-ए-अफ़सुर्दगी को 'ऐश-ए-बेताबी हराम
वर्नः दँदाँ दरदिल अफ़शुर्दन बिना-ए-ख़न्दः है

सोज़िश-ए-बातिन के हैं अह्बाब मुंकिर, वर्नः याँ
दिल मुहीत-ए-गिरियः-ओ-लब आश्ना-ए-ख़न्दः है

२१४

हुस्न-ए-बेपरवा ख़रीदार-ए-मता'-ए-जल्वः है
आइनः ज़ानु-ए-फ़िक्र-ए-इख़्तिरा'-ए-जल्वः है

ता कुजा, अय आगही, रँग-ए-तमाशा बाख़्तन
चश्म-ए-वा गर्दीदः आग़ोश-ए-विदा'-ए-जल्वः है

२१५

जब तक दहान-ए-ज़ख़्म न पैदा करे कोई
मुश्किल, कि तुझसे राह-ए-सुख़न वा करे कोई

'आलम ग़ुबार-ए-वह्शत-ए-मजनूँ है सरबसर
कब तक ख़याल-ए-तुर्रः-ए-लैला करे कोई

अफ़सुर्दगी नहीं तरब इंशा-ए-इल्तिफ़ात
हाँ, दर्द बन के दिल में मगर जा करे कोई

रोने से, अय नदीम, मलामत न कर मुझे
आख़िर कभी तो, 'उक़्दः-ए-दिल वा करे कोई

चाक-ए-जिगर से, जब रह-ए-पुरसिश न वा हुई
क्या फ़ायदः, कि जैब को रुस्वा करे कोई

लख़्त-ए-जिगर से है रग-ए-हर ख़ार, शाख़-ए-गुल
ता चन्द बाग़बानि-ए-सहरा करे कोई

नाकामि-ए-निगाह है बर्क़-ए-नज़ार: सोज़
तू वह नहीं, कि तुझको तमाशा करे कोई

हर सँग-ओ-ख़िश्त है सदफ़-ए-गौहर-ए-शिकस्त
नुक़साँ नहीं, जुनूँ से जो सौदा करे कोई

सरबर हुई न वा'द:-ए-सब्र आज़मा से 'उम्र
फ़ुर्सत कहाँ, कि तेरी तमन्ना करे कोई

है वह्शत-ए-तबी'अत-ए-ईजाद यास ख़ेज़
यह दर्द वह नहीं, कि न पैदा करे कोई

बेकारि-ए-जुनूँ को है सर पीटने का शग़्ल
जब हाथ टूट जायें, तो फिर क्या करे कोई

हुस्न-ए-फ़रोग़-ए-शम्'-ए-सुख़न दूर है, असद
पहले दिल-ए-गुदाख़्ता पैदा करे कोई

इब्न-ए-मरियम हुआ करे कोई
मेरे दुख की दवा करे कोई

शर'-ओ-आईन पर मदार सही
ऐसे क़ातिल का क्या करे कोई

चाल, जैसे कड़ी कमान का तीर
दिल में ऐसे के जा करे कोई

बात पर वाँ ज़बान कटती है
वह कहें और सुना करे कोई

बक रहा हूँ जुनूँ में क्या क्या कुछ
कुछ न समझे, ख़ुदा करे, कोई

न सुनो, गर बुरा कहे कोई
न कहो, गर बुरा करे कोई

रोक लो, गर ग़लत चले कोई
बख़्श दो, गर ख़ता करे कोई

कौन है, जो नहीं है हाजतमन्द
किस की हाजत रवा करे कोई

क्या किया ख़िज़्र ने सिकन्दर से
अब किसे रहनुमा करे कोई

जब तवक़्क़ो'अ ही उठ गई, ग़ालिब
क्यों किसी का गिला करे कोई

२१७

बहुत सही ग़म-ए-गेती, शराब कम क्या है
ग़ुलाम-ए-साक़ि-ए-कौसर हूँ, मुझको ग़म क्या है

तुम्हारी तर्ज़-ओ-रविश, जानते हैं हम, क्या है
रक़ीब पर है अगर लुत्फ़, तो सितम क्या है

सुख़न में ख़ामः-ए-ग़ालिब की आतश अफ़शानी
यक़ीं है हमको भी, लेकिन अब उसमें दम क्या है

२१८

बाग़ पाकर ख़फ़क़ानी, यह डराता है मुझे
सायः-ए-शाख़-ए-गुल, अफ़'ई नज़र आता है मुझे

जौहर-ए-तेग़ बसर चश्मः-ए-दीगर मा'लूम
हूँ मैं वह सब्ज़ः, कि ज़हराब उगाता है मुझे

मुद्द'आ महव-ए-तमाशा-ए-शिकस्त-ए-दिल है
आइनःख़ाने में कोई लिये जाता है मुझे

नालः सरमायः-ए-यक 'आलम-ओ-'आलम कफ़-ए-ख़ाक
आस्माँ बैज़ः-ए-क़ुम्री नज़र आता है मुझे

ज़िन्दगी में तो वह महफ़िल से उठा देते थे
देखूँ, अब मर गये पर, कौन उठाता है मुझे

२१९

रौंदी हुई है, कौकबः-ए-शह्रियार की
इतराये क्यों न खाक, सर-ए-रहगुज़ार की

जब उसके देखने के लिये आयें बादशाह
लोगों में क्यों नुमूद न हो, लालःज़ार की

भूके नहीं हैं सैर-ए-गुलिस्ताँ के हम, वले
क्योंकर न खाइये, कि हवा है बहार की

२२०

हज़ारों ख़्वाहिशें ऐसी, कि हर ख़्वाहिश प दम निक्ले
बहुत निक्ले मिरे अर्मान, लेकिन फिर भी कम निक्ले

डरे क्यों मेरा क़ातिल, क्या रहेगा उसकी गर्दन पर
वह ख़ूँ, जो चश्म-ए-तर से 'अुम्र भर यों दम बदम निक्ले

निक्लना ख़ुल्द से आदम का सुनते आये थे, लेकिन
बहुत बे आबरू होकर तिरे कूचे से हम निक्ले

भरम खुल जाये, ज़ालिम, तेरे क़ामत की दराज़ी का
अगर इस तुर्रः-ए-पुर पेच-ओ-ख़म का पेच-ओ-ख़म निकले

मगर लिखवाये कोई उसको ख़त, तो हम से लिखवाये
हुई सुब्ह, और घर से कान पर रख कर क़लम निकले

हुई इस दौर में मंसूब मुझसे बादः आशामी
फिर आया वह ज़मानः, जो जहाँ में जाम-ए-जम निकले

हुई जिन से तवक़्क़ो'अ, ख़स्तगी की दाद पाने की
वह हम से भी ज़ियादः ख़स्तः-ए-तेग़-ए-सितम निकले

महब्बत में नहीं है फ़र्क़, जीने और मरने का
उसी को देख कर जीते हैं, जिस काफ़िर प दम निकले

कहाँ मैख़ाने का दरवाज़ः, ग़ालिब, और कहाँ वा'अिज़
पर इतना जानते हैं, कल वह जाता था, कि हम निकले

२२१

कोह के हों बार-ए-खातिर, गर सदा हो जाइये
बेतकल्लुफ, अय शरार-ए जस्तः, क्या हो जाइये

बैज़ः आसा, तँग बाल-ओ-पर प है कुँज-ए-क़फ़स
अज़ सर-ए-नौ ज़िन्दगी हो, गर रिहा हो जाइये

२२२

मस्ती ब ज़ौक़-ए-ग़फ़्लत-ए-साक़ी हलाक है
मौज-ए-शराब यक मिश़ः-ए-ख़्वाबनाक है

जुज़ ज़ख़्म-ए-तेग़-ए-नाज़, नहीं दिल में आरज़ू
जैब-ए-ख़याल भी तिरे हाथों से चाक है

जोश-ए-जुनूँ से कुछ नज़र आता नहीं, असद
सहरा हमारी आँख में यक मुश्त-ए-खाक है

२२३

लब-ए-'ईसा की जुँबिश करती है गहवारः जुँबानी
क़यामत कुश्तः-ए-ला'ल-ए-बुताँ का ख़्वाब-ए-सँगीं है

२२४

आमद-ए-सैलाब तूफ़ान-ए-सदा-ए-आब है
नक़्श-ए-पा जो कान में रखता है उँगली जादः से

बज़्म-ए-मै, वह्शतकदः है, किसकी चश्म-ए-मस्त का
शीशे में नब्ज़-ए-परी, पिन्हाँ है मौज-ए-बादः से

२२५

हूँ मैं भी तमाशाइ-ए-नैरँग-ए-तमन्ना
मतलब नहीं कुछ इससे, कि मतलब ही बर आवे

२२६

सियाही जैसे गिर जावे दम-ए-तह्रीर काग़ज़ पर
मिरी क़िस्मत में यों तस्वीर है शबहा-ए-हिज्राँ की

२२७

हुजूम-ए-नालः, हैरत, 'आजिज़-ए-'अर्ज़-ए-यक अफ़ग़ाँ है
ख़मोशी, रेशः-ए-सद् नैसिताँ से ख़स ब दन्दाँ है

तकल्लुफ़ बर तरफ़, है जाँसिताँ तर, लुत्फ-ए-बदख़ूयाँ
निगाह-ए-बेहिजाब-ए-नाज़, तेग़-ए-तेज़-ए-'उरियाँ है

हुई यह कस्रत-ए-ग़म से तलफ, कैफ़ियत-ए-शादी
कि सुब्ह-ए-'ईद मुझको बदतर अज़ चाक-ए-गरीबाँ है

दिल-ओ-दीं नक़्द ला, साक़ी से गर सौदा किया चाहे
कि इस बाज़ार में, साग़र मता'-ए-दस्त गरदाँ है

ग़म आग़ोश-ए-बला में परवरिश देता है, 'आशिक़ को
चराग़-ए-रौशन अपना, क़ुल्ज़ुम-ए-सरसर का मरजाँ है

२२८

खमोशियों में तमाशा अदा निकलती है
निगाह, दिल से तिरे, सुर्मः सा निकलती है

फ़िशार-ए-तँगि-ए-खल्वत से बनती है शबनम
सबा जो ग़ुंचे के पर्दे में जा निकलती है

न पूछ सीनः-ए-'आशिक़ से आब-ए-तेग़-ए-निगाह
कि ज़ख़्म-ए-रौज़न-ए-दर से हवा निकलती है

२२९

जिस जा नसीम शानः कश-ए-ज़ुल्फ़-ए-यार है
नाफ़ः दिमाग़ आहू-ए-दश्त-ए-ततार है

किसका सुराग़-ए-जल्वः है हैरत को, अय ख़ुदा
आईनः फ़र्श-ए-शश जिहत-ए-इन्तिज़ार है

है ज़र्रः ज़र्रः तँगि-ए-जा से ग़ुबार-ए-शौक़
गर दाम यह है, वुस'अत-ए-सहरा शिकार है

दिल मुद्द'अि-ओ-दीदः बना मुद्द'आ 'अलैह
नज़्ज़ारे का मुक़द्दमः फिर रू ब कार है

छिड़के है शबनम आईनः-ए-बर्ग-ए-गुल पर आब
अय 'अन्दलीब, वक़्त-ए-विदा'-ए-बहार है

पच आ पड़ी है वा'दः-ए-दिलदार की मुझे
वह आये या न आये प याँ इन्तिज़ार है

बेपर्दः सू-ए-वादि-ए-मजनूँ गुज़र न कर
हर ज़र्रे के निक़ाब में दिल बेक़रार है

अय 'अन्दलीब यक कफ़-ए-ख़स बहर-ए-आशियाँ
तूफ़ान-ए-आमद आमद-ए-फ़स्ल-ए-बहार है

दिल मत गँवा, ख़बर न सही, सैर ही सही
अय बे दिमाग़, आइनः तिम्साल दार है

ग़फ़्लत कफ़ील-ए-'अुम्र-ओ-असद ज़ामिन-ए-नशात
अय मर्ग-ए-नागहाँ, तुझे क्या इन्तिज़ार है

आईनः क्यों न दूँ, कि तमाशा कहें जिसे
ऐसा कहाँ से लाऊँ, कि तुझ सा कहें जिसे

हस्रत ने ला रखा, तिरी बज़्म-ए-ख़याल में
गुल्दस्त:-ए-निगाह, सुवैदा कहें जिसे

फूँका है किसने गोश-ए-महब्बत में, अय ख़ुदा
अफ़्सून-ए-इन्तिज़ार, तमन्ना कहें जिसे

सर पर हुजूम-ए-दर्द-ए-ग़रीबी से, डालिये
वह एक मुश्त-ए-ख़ाक, कि सह्रा कहें जिसे

है चश्म-ए-तर में हस्रत-ए-दीदार से निहाँ
शौक़े 'अिनाँ गुसेख़्त:, दरिया कहें जिसे

दरकार है, शिगुफ़्तन-ए-गुलहा-ए-'अैश को
सुब्ह-ए-बहार, पँब:-ए-मीना कहें जिसे

ग़ालिब, बुरा न मान, जो वा'अिज़ बुरा कहे
ऐसा भी कोई है, कि सब अच्छा कहें जिसे

२३१

शबनम ब गुल-ए-लाल: न ख़ाली ज़ि अदा है
दाग़-ए-दिल-ए-बे दर्द नज़र गाह-ए-हया है

दिल ख़ूँ शुद:-ए-कश्मकश-ए-हस्रत-ए-दीदार
आईन: बदस्त-ए-बुत-ए-बदमस्त-ए-हिना है

शो'ले से न होती, हवस-ए-शो'लः ने जो की
जी किस क़दर अफ़सुर्दगि-ए-दिल प जला है

तिम्साल में तेरी, है वह शोख़ी, कि बसद ज़ौक़
आईनः ब अन्दाज़-ए-गुल, आग़ोश कुशा है

क़ुम्री कफ़-ए-ख़ाकिस्तर-ओ-बुलबुल क़फ़स-ए-रँग
अय नालः, निशान-ए-जिगर-ए-सोख़्तः क्या है

ख़ू ने तिरी अफसुर्दः किया, वह्शत-ए-दिल को
मा'शूक़ि-ओ-बेहौसलगी, तुरफ़ः बला है

मजबूरि-ओ-दा'वा-ए-गिरफ़्तारि-ए-उल्फ़त
दस्त-ए-तह-ए-सँग आमदः पैमान-ए-वफ़ा है

मा'लूम हुआ हाल-ए-शहीदान-ए-गुज़श्तः
तेग़-ए-सितम आईनः-ए-तस्वीर नुमा है

अय परतव-ए-ख़ुर्शीद-ए-जहाँ ताब, इधर भी
साये की तरह हम प 'अजब वक़्त पड़ा है

नाकरदः गुनाहों की भी हस्रत की मिले दाद
यारब, अगर इन करदः गुनाहों की सज़ा है

बेगानगि-ए-ख़ल्क़ से बेदिल न हो, ग़ालिब
कोई नहीं तेरा, तो मिरी जान, ख़ुदा है

मंज़ूर थी यह शक्ल, तजल्ली को नूर की
क़िस्मत खुली तिरे क़द-ओ-रुख से ज़ुहूर की

इक ख़ूँ चकाँ कफ़न में करोड़ों बनाव हैं
पड़ती है आँख, तेरे शहीदों प, हूर की

वा'इज़ न तुम पियो, न किसी को पिला सको
क्या बात है तुम्हारी शराब-ए-तुहूर की

लड़ता है मुझसे हश्र में क़ातिल, कि क्यों उठा
गोया, अभी सुनी नहीं आवाज़ सूर की

आमद बहार की है, जो बुलबुल है नग़्मः सँज
उड़ती सी इक ख़बर है, ज़बानी तुयूर की

गो वाँ नहीं, प वाँ के निकाले हुये तो हैं
का'बे से इन बुतों को भी निस्बत है दूर की

क्या फ़र्ज़ है, कि सब को मिले एक सा जवाब
आओ न, हम भी सैर करें कोह-ए-तूर की

गर्मी सही क्लाम में, लेकिन न इस क़दर
की जिससे बात, उसने शिकायत ज़ुरूर की

ग़ालिब, गर इस सफ़र में मुझे साथ ले चलें
हज का सवाब नज़्र करूँगा हुज़ूर की

२३२

ग़म खाने में बोदा, दिल-ए-नाकाम, बहुत है
यह रँज, कि कम है मै-ए-गुल्फ़ाम, बहुत है

कहते हुये साक़ी से हया आती है, वर्नः
है यों, कि मुझे दुर्द-ए-तह-ए-जाम बहुत है

ने तीर कमाँ में है, न सय्याद कमीं में
गोशे में क़फ़स के, मुझे आराम बहुत है

क्या ज़ोहद को मानूँ, कि न हो गरचेः रियाई
पादाश-ए-'अमल की तम'-ए-ख़ाम बहुत है

हैं अहल-ए-ख़िरद किस रविश-ए-ख़ास प नाज़ाँ
पा बस्तगि-ए-रस्म-ओ-रह-ए-'आम बहुत है

ज़मज़म ही प छोड़ो, मुझे क्या तौफ़-ए-हरम से
आलूदः ब मै जामः-ए-एह्राम, बहुत है

है क़ेह्र गर अब भी न बने बात, कि उनको
इंकार नहीं और मुझे इब्राम बहुत है

ख़ूँ होके जिगर आँख से टपका नहीं, अय मर्ग
रहने दे मुझे याँ, कि अभी काम बहुत है

होगा कोई ऐसा भी, कि ग़ालिब को न जाने
शा'अिर तो वह अच्छा है, प बदनाम बहुत है

२३४

मुद्दत हुई है यार को मेहमाँ किये हुये
जोश-ए-क़दह से, बज़्म चराग़ाँ किये हुये

करता हूँ जम'अ फिर, जिगर-ए-लख़्त लख़्त को
'अरसः हुआ है दा'वत-ए-मिश़गाँ किये हुये

फिर वज़'-ए-एहतियात से रुकने लगा है दम
बरसों हुये हैं चाक गरीबाँ किये हुये

फिर गर्म-ए-नालःहा-ए-शरर बार है नफ़स
मुद्दत हुई है सैर-ए-चराग़ाँ किये हुये

फिर पुरसिश-ए-जराहत-ए-दिल को चला है 'अिश्क़
सामान-ए-सद हज़ार नमकदाँ किये हुये

फिर भर रहा है ख़ामः-ए-मिश़गाँ, बख़ून-ए-दिल
साज़-ए-चमन तराज़ि-ए-दामाँ किये हुये

बाहम दिगर हुये हैं दिल-ओ-दीद: फिर रक़ीब
नज़्ज़ार:-ओ-ख़याल का सामाँ किये हुये

दिल फिर तवाफ़-ए-कू-ए-मलामत को जाये है
पिन्दार का सनमकद: वीराँ किये हुये

फिर शौक़ कर रहा है ख़रीदार की तलब
'अर्ज़-ए-मता'-ए-'अक़्ल-ओ-दिल-ओ-जाँ किये हुये

दौड़े है फिर हर एक गुल-ओ-लाल: पर ख़याल
सद गुलसिताँ निगाह का सामाँ किये हुये

फिर चाहता हूँ नाम:-ए-दिलदार खोलना
जाँ नज़र-ए-दिल फ़रेबि-ए-'अुन्वाँ किये हुये

माँगे है फिर, किसी को लब-ए-बाम पर, हवस
ज़ुल्फ़-ए-सियाह रुख़ प परीशाँ किये हुये

चाहे है फिर किसी को मुक़ाबिल में आरज़ू
सुरमे से तेज़ दश्न:-ए-मिश़गाँ किये हुये

इक नौबहार-ए-नाज़ को ताके है फिर, निगाह
चेहर: फ़रोग़-ए-मै से गुलिस्ताँ किये हुये

फिर, जी में है कि दर प किसी के पड़े रहें
सर ज़ेर-ए-बार-ए-मिन्नत-ए-दरबाँ किये हुये

जी ढूण्डता है फिर वही फ़ुर्सत, कि रात दिन
बैठे रहें तसव्वुर-ए-जानाँ किये हुये

ग़ालिब, हमें न छेड़ कि फिर जोश-ए-अश्क से
बैठे हैं हम तहय्यः-ए-तूफ़ाँ किये हुये

२३५

नवेद-ए-अम्न है बेदाद-ए-दोस्त, जाँ के लिये
रही न तर्ज़-ए-सितम कोई आस्माँ के लिये

बला से गर मिश़ः-ए-यार तश्नः-ए-ख़ूँ है
रखूँ कुछ अपनी भी मिश़गान-ए-ख़ूँ फ़िशाँ के लिये

वह जिन्दः हम हैं, कि हैं रूशनास-ए-ख़ल्क़, अय ख़िज़्र
न तुम, कि चोर बने 'अम्र-ए-जाविदाँ के लिये

रहा बला में भी मैं मुब्तिला-ए-आफ़त-ए-रश्क
बला-ए-जाँ है अदा तेरी इक जहाँ के लिये

फलक न दूर रख उस से मुझे, कि मैं ही नहीं
दराज़ दस्ति-ए-क़ातिल के इम्तिहाँ के लिये

मिसाल यह मिरी कोशिश की है, कि मुर्ग़-ए-असीर
करे क़फ़स में फ़राहम ख़स आशियाँ के लिये

गदा समझके वह चुप था, मिरी जो शामत आये
उठा, औ॑र उठके क़दम, मैं ने पास्बाँ के लिये

बकद्र -ए- शौक़ नहीं, ज़र्फ़ -ए- तँगना -ए- ग़ज़ल
कुछ औ॑र चाहिये वुस‘अत, मिरे बयाँ के लिये

दिया है ख़ल्क़ को भी, ता उसे नज़र न लगे
बना है ‘ऐश तजम्मुल हुसैन खाँ के लिये

ज़बाँ प बार-ए-ख़ुदाया, यह किसका नाम आया
कि मेरे नुत्क़ ने बोसे मिरी ज़बाँ के लिये

नसीर-ए-दौलत-ओ-दीं, और मु‘ईन-ए-मिल्लत-ओ-मुल्क
बना है चर्ख़-ए-बरीं जिसके आस्ताँ के लिये

ज़मानः ‘अहद में उसके है महव-ए-आराइश
बनेंगे और सितारे अब आस्माँ के लिये

वरक़ तमाम हुआ और मद्ह बाक़ी है
सफ़ीनः चाहिये इस बह्र-ए-बेकराँ के लिये

अदा-ए-ख़ास से ग़ालिब हुआ है नुक्तःसरा
सलाये आम है यारान-ए-नुक्तःदाँ के लिये

ज़मीम :

१

क़त'अ :

गये वह दिन, कि नादानिस्तः ग़ैरों की वफ़ादारी
किया करते थे तुम तक़रीर, हम ख़ामोश रहते थे

बस, अब बिगड़े प क्या शर्मिन्दगी, जाने दो मिल जाओ
क़सम लो हमसे, गर यह भी कहें, क्यों हम न कहते थे

२

क़र्त'अ:

कलकत्ते का जो ज़िक्र किया तू ने हमनशीं
इक तीर मेरे सीने में मारा, कि हाय हाय

वह सब्ज़:ज़ारहा-ए-मुतर्र:, कि है ग़ज़ब
वह नाज़नीं बुतान-ए-ख़ुदआरा, कि हाय हाय

सब्र आज़मा वह उनकी निगाहें, कि हफ़ नज़र
ताक़त रुबा वह उनका इशारा, कि हाय हाय

वह मेव:हा-ए-ताज़:-ओ-शीरीं कि वाह वाह
वह बाद:हा-ए-नाब-ओ-गवारा, कि हाय हाय

३

अपना अह्‌वाल-ए-दिल-ए-ज़ार कहूँ या न कहूँ
है हया माने'-ए-इज़्हार कहूँ या न कहूँ

नहीं करने का मैं तक़रीर, अदब से बाहर
मैं भी हूँ वाक़िफ़-ए-असरार, कहूँ या न कहूँ

शिक्वः समझो इसे, या कोई शिकायत समझो
अपनी हस्ती से हूँ बेज़ार, कहूँ या न कहूँ

अपने दिल ही से मैं अह्वाल-ए-गिरफ़्तारि-ए-दिल
जब न पाऊँ कोई ग़मख़्वार, कहूँ या न कहूँ

दिल के हाथों से, कि है दुश्मन-ए-जानी अपना
हूँ इक आफ़त में गिरफ़्तार, कहूँ या न कहूँ

मैं तो दीवानः हूँ, और एक जहाँ है ग़म्माज़
गोश हैं दर पस-ए-दीवार, कहूँ या न कहूँ

आप से वह मिरा अह्वाल न पूछे, तो असद
हस्ब-ए-हाल अपने फिर अश'आर कहूँ या न कहूँ

४

मुमकिन नहीं, कि भूलके भी आर्मीदः हूँ
मैं दश्त-ए-ग़म में आहू-ए-सय्याद दीदः हूँ

हूँ दर्दमन्द, जब्र हो या इख़्तियार हो
गह नालः-ए-कशीदः, गह अश्क-ए-चकीदः हूँ

जाँ लब प आई, तो भी न शीरीं हुआ दहन
अज़ बसकि, तल्ख़ि-ए-ग़म-ए-हिजराँ चशीदः हूँ

ने सुबह: से 'अिलाक़ः, न साग़र से राब्तः
मैं मा'रिज़-ए-मिसाल में, दस्त-ए-बुरीद: हूँ

हूँ ख़ाकसार, पर न किसी से है मुझको लाग
ने दानः-ए-फ़ुताद: हूँ, ने दाम चीद: हूँ

जो चाहिये, नहीं वह मिरी क़द्र-ओ-मंज़िलत
मैं यूसुफ़-ए-बक़ीमत-ए-अव्वल ख़रीद: हूँ

हरगिज़ किसी के दिल में नहीं है मिरी जगह
हूँ मैं कलाम-ए-नग़्ज़, वले नाशुनीद: हूँ

अह्ल-ए-वर'अ के हल्क़े में हरचन्द हूँ ज़लील
पर 'आसियों के फ़िर्क़े में, मैं बरगुज़ीद: हूँ

पानी से सग गज़ीद: डरे जिस तरह, असद
डरता हूँ आइने से, कि मर्दुम गज़ीद: हूँ

५

मज्लिस-ए-शम्'अ 'अिज़ाराँ में जो आ जाता हूँ
शम्'अ साँ मैं तह-ए-दामान-ए-सबा जाता हूँ

होवे है जाद:-ए-रह, रिश्तः-ए-गौहर हर गाम
जिस गुज़रगाह में, मैं आबलः पा जाता हूँ

सरगिराँ मुझसे सुबुक रौ के न रहने से रहो
कि बयक जुँबिश-ए-लब मिस्ल-ए-सदा जाता हूँ

६

मैं हूँ मुश्ताक़-ए-जफ़ा, मुझ प जफ़ा और सही
तुम हो बेदाद से ख़ुश, इस से सिवा और सही

ग़ैर की मर्ग का ग़म किस लिये, अय ग़ैरत-ए-माह
हैं हवस पेशः बहुत, वह न हुआ, और सही

तुम हो बुत, फिर तुम्हें पिन्दार-ए-ख़ुदाई क्यों है
तुम ख़ुदावन्द ही कहलाओ, ख़ुदा और सही

हुस्न में हूर से बढ़कर नहीं होने के कभी
आपका शेवः-ओ-अन्दाज़-ओ-अदा और सही

तेरे कूचे का है माइल दिल-ए-मुज़्तर मेरा
का'बः इक और सही, क़िब्लः नुमा और सही

कोई दुनिया में मगर बाग़ नहीं है, वा'अिज़
ख़ुल्द भी बाग़ है, ख़ैर आब-ओ-हवा और सही

क्यों न फ़िरदौस में दोज़ख़ को मिलालें, यारब
सैर के वास्ते थोड़ी सी फ़ज़ा और सही

मुझको वह दो, कि जिसे खाके न पानी माँगूँ
ज़ह्र कुछ और सही, आब-ए-बक़ा और सही

मुझसे, ग़ालिब, यह 'अलाई ने ग़ज़ल लिखवाई
एक बेदाद गर-ए-रँज फ़िज़ा और सही

७

है ग़नीमत, कि बउम्मीद गुज़र जायगी 'उम्र
न मिले दाद, मगर रोज़-ए-जज़ा है तो सही

दोस्त गर कोई नहीं है, जो करे चारःगरी
न सही, एक तमन्ना-ए-दवा है तो सही

ग़ैर से, देखिये क्या ख़ूब निभाई उसने
न सही हमसे, पर उस बुत में वफ़ा है तो सही

कभी आजायेगी, क्यों करते हो जल्दी, ग़ालिब
शोह्रः-ए-तेज़ि-ए-शमशीर-ए-क़ज़ा है तो सही

८

अब्र रोता है, कि बज़्म-ए-तरब आमादः करो
बर्क़ हँसती है, कि फ़ुर्सत कोई दम है हमको

९

चन्द तस्वीर-ए-बुताँ, चन्द हसीनों के ख़ुतूत
बा'द मरने के मिरे घर से यह सामाँ निकला

१०

दो रँगियाँ यह ज़माने की जीते जी हैं सब
कि मुर्दों को न बदलते हुये कफ़न देखा

११

दम-ए-वापसीं बर सर-ए-राह है
'अज़ीज़ो, अब अल्लाह ही अल्लाह है

१२

है कहाँ, तमन्ना का दूसरा क़दम, यारब
हमने दश्त-ए-इम्काँ को, एक नक़्श-ए-पा पाया

१३

अगर आसूदगी है मुद्द'आ-ए-रँज-ए-बेताबी
निसार-ए-गर्दिश-ए-पैमानः-ए-मै रोज़गार अपना

१४

असद, यह 'अिज्ज़-ओ-बेसामानि-ए-फ़िर'अौन तौअम है
जिसे तू बन्दगी कहता है, दा'वा है ख़ुदाई का

१५

हमने वह्शत कद:ए-बज़्म-ए-जहाँ में ज्यों शम्'अ
शो'लः-ए-'अिश्क़ को अपना सर-ओ-सामाँ समझा

१६

बसूरत तकल्लुफ़, बमा'नी तअस्सुफ़
असद, मैं तबस्सुम हूँ पशमुर्दगाँ का

१७

ख़ुद परस्ती से रहे बाहम दिगर, ना आश्ना
बेकसी मेरी शरीक, आईनः तेरा आश्ना

रब्त-ए-यक शीराज़ः-ए-वहशत हैं अज्ज़ा-ए-बहार
सब्ज़ः बेगानः, सबा आवारः, गुल ना आश्ना

१८

फिर वह सू-ए-चमन आता है, ख़ुदा ख़ैर करे
रँग उड़ता है गुलिस्ताँ के हवादारों का

१९

अज़ आँजा कि हस्रत कश-ए-यार हैं हम
रक़ीब-ए-तमन्ना-ए-दीदार हैं हम

तमाशा -ए- गुल्शन, तमन्ना-ए-चीदन
बहार आफ़रीना, गुनहगार हैं हम

न ज़ौक़-ए-गरीबाँ, न परवा-ए-दामाँ
निगह आश्ना-ए-गुल-ओ-ख़ार हैं हम

असद' शिकवः कुफ़्र-ओ-दु'आ ना सिपासी
हुजूम-ए-तमन्ना से लाचार हैं हम

२०

फिर हल्क़ः-ए-काकुल में पड़ीं दीद की राहें
ज्यों दूद फ़राहम हुईं रौज़न में निगाहें

दैर-ओ-हरम, आईनः-ए-तकरार-ए-तमन्ना
वामान्दगि-ए-शौक़ तराशे है पनाहें

२१

हूँ गर्मि-ए-नशात-ए-तसव्वुर से नग़्मः सँज
मैं 'अन्दलीब-ए-गुल्शन-ए-ना आफ़रीदः हूँ

२२

अय नवासाज़-ए-तमाशा, सर ब कफ़ जलता हूँ मैं
इक तरफ़ जलता है दिल, और इक तरफ़ जलता हूँ मैं

है तमाशा गाह-ए-सोज़-ए-ताज़ः, हर यक 'अज़्व-ए-तन
ज्यों चराग़ान-ए-दिवाली सफ़ ब सफ़ जलता हूँ

२३

असद, बज़्म-ए-तमाशा में, तग़ाफ़ुल पर्दःदारी है
अगर ढाँपे, तो आँखें ढाँप, हम तस्वीर-ए-'अुरियाँ हैं

२४

फ़ुतादगी में क़दम उस्तुवार रखते हैं
बरँग-ए-जादः सर-ए-कू-ए-यार रखते हैं

जुनून-ए-फ़ुर्क़त-ए-यारान-ए-रफ़्तः है, ग़ालिब
बसान-ए-दश्त दिल-ए-पुर ग़ुबार रखते हैं

२५

है तिलिस्म-ए-दैर में, सद हश्र-ए-पादाश-ए-'अमल
आगही ग़ाफ़िल, कि यक इम्रोज़ बे फर्दा नहीं

२६

मुझे मा'लूम है, जो तूने मेरे हक़ में सोचा है
कहीं हो जाये जल्द, अय गर्दिश-ए-गर्दून-ए-दूँ वह भी

२७

है यास में असद को साक़ी से भी फ़राग़त
दरिया से ख़ुश्क गुज़रे मस्तों की तश्नःकामी

२८

गर मुसीबत थी, तो ग़ुर्बत में उठा लेते, असद
मेरी देह्ली ही में होनी थी यह ख़्वारी, हाय हाय

२९

बे चश्म-ए-दिल न कर हवस-ए-सैर-ए-लालःज़ार
या'नी यह हर वरक़, वरक़-ए-इन्तिख़ाब है

३०

ता चन्द पस्त फ़ितरति-ए-तब'-ए-आरज़ू
यारब, मिले बलन्दि-ए-दस्त-ए-दु'आ मुझे

यक बार इम्तिहान-ए-हवस भी ज़रूर है
अय जोश-ए-'अिश्क़, बादः-ए-मर्द आज़्मा मुझे

३१

असद, उठना क़यामत क़ामतों का, वक़्त-ए-आराइश
लिबास-ए-नज़्म में, बालीदन-ए-मज़मून-ए-'आली है

३२

हम मश्क़-ए-फ़िक्र-ए-वस्ल-ओ-ग़म-ए-हिज्र से, असद
लाइक़ नहीं रहे हैं, ग़म-ए-रोज़गार के

३३

असद, बन्द-ए-क़बा-ए-यार है फ़िरदौस का ग़ुंचः
अगर वा हो, तो दिखला दूँ, कि यक 'आलम गुलिस्ताँ है

३४

आतश अफ़रोज़ि-ए-यक शो'लः-ए-ईमाँ तुझसे
चश्मक आराइ-ए-सद शह्र-ए-चराग़ाँ मुझसे

३५

असद, बहार-ए-तमाशा-ए-गुलिस्तान-ए-हयात
विसाल-ए-लाल: 'अिज़ारान-ए-सर्व क़ामत है

३६

रश्क है आसाइश-ए-अर्बाब-ए-ग़फ़्लत पर, असद
पेच-ओ-ताब-ए-दिल, नसीब-ए-ख़ातिर-ए-आगाह है

३७

तोड़ बैठे, जबकि हम जाम-ओ-सुबू, फिर हमको क्या
आस्माँ से बाद:-ए-गुल्फ़ाम, गो बरसा करे

३८

ता चन्द, नाज़-ए-मस्जिद-ओ-बुतख़ान: खेंचिये
ज्यों शम्'अ, दिल ब ख़ल्वत-ए-जानान: खेंचिये

'अिज्ज़-ओ-नियाज़ से तो न आया वह राह पर
दामन को उसके आज हरीफ़ान: खेंचिये

है ज़ौक़-ए-गिरियः, 'अ़ज़्म-ए-सफ़र कीजिये, असद
रख़्त-ए-जुनून-ए-सैल ब वीरानः खेंचिये

३९

ख़ुद नामः बन के जाइये, उस आश्ना के पास
क्या फायदः कि मिन्नत-ए-बेगानः खेंचिये

४०

जाम-ए-हर ज़र्रः, है सर्शार-ए-तमन्ना मुझसे
किसका दिल हूँ, कि दो 'आलम से लगाया है मुझे

४१

गदा-ए-ताक़त-ए-तकरीर है ज़बाँ तुझ से
कि ख़ामुशी को है पैराय:-ए-बयाँ तुझ से

फ़सुर्दगी में है फ़रियाद-ए-बेदिलाँ तुझ से
चराग़:-ए-सुबह-ओ-गुल-ए-मौसम-ए-ख़ज़ाँ तुझ से

बहार-ए-हैरत-ए-नज़्ज़ार:, सख़्त जानी से
हिना-ए-पा-ए-अजल ख़ून-ए-कुश्तगाँ तुझसे

तरावत-ए-सहर ईजादि-ए-असर, यकसू
बहार-ए-नालः-ओ-रँगीनि-ए-फ़ुग़ाँ तुझ से

चमन चमन गुल-ए-आईनः दर कनार-ए-हवस
उमीद महव-ए-तमाशा-ए-गुल्सिताँ तुझ से

नियाज़, पर्दः-ए-इज़्हार-ए-ख़ुदपरस्ती है
जबीन-ए-सिज्दः फ़िशाँ तुझसे, आस्ताँ तुझ से

बहानः जूइ-ए-रह्मत, कमीं गर-ए-तक़रीब
वफ़ा-ए-हौसलः-ओ-रँज-ए-इम्तिहाँ तुझ से

असद, ब मौसम-ए-गुल दर तिलिस्म-ए-कुँज-ए-क़फ़स
ख़िराम तुझसे, सबा तुझसे, गुल्सिताँ तुझ से

बयाज़

मिलने के पते :

मूल्य : २५)

मक्तबः जामि'अः (लिमिटेड)

प्रिन्सेस बिल्डिंग

बम्बई ३.

✡

राइटर्स एम्पोरियम (पराइवेट लिमिटेड)

पोस्ट बॉक्स १४११

बम्बई १.

✡

उर्दू पब्लिशर्स

६३, मोरलैण्ड रोड

बम्बई ८.

✡

अंजुमन तरक्क़ि-ए-उर्दू (हिन्द)

अलीगढ़

(यू. पी.)

✡

अदबी प्रिंटिंग प्रेस बम्बई ८ में छपा

१९५८